कुछ तो रह गया

कुछ अधूरा, कुछ अनकहा

गौरव वशिष्ठ

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Gaurav Vashishtha 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-81-17827-23-9

Cover Design: Aafiya Saifi
Typesetting: Namrata Saini

First Edition: November 2026

उनके नाम

उनके नाम,
जिनसे मिला कुछ,
जिनसे छूटा कुछ,
और जिनकी वजह से,
मैं थोड़ा और मैं हुआ।

उनके नाम,
जिन्होंने मुझे हँसाया, रुलाया, बदला,
और अंत में,
लिखना सिखा दिया।

उनके नाम,
जिनकी मौजूदगी एक कहानी थी,
जिनकी गैरमौजूदगी एक शायरी,
और जिनके बाद,
कुछ तो रह गया।

लेखक के बारे में



गौरव वशिष्ठ की पहचान आधुनिक डेटा साइंस (Data Science) और प्राचीन वैदिक ज्योतिष ज्ञान के एक दुर्लभ संगम के रूप में होती है। वह '**Know Your Planets**' के संस्थापक, लेखक और ज्योतिषी हैं, जिन्हें सितारों के पीछे छिपे विशुद्ध विज्ञान और तर्क को सामने लाने के लिए जाना जाता है।

MCA और MBA जैसी उच्च शिक्षा के साथ, गौरव ने एक दशक से अधिक समय कॉर्पोरेट जगत में बिताया, जहाँ उन्होंने अंतरराष्ट्रीय स्तर की जटिल चुनौतियों को सुलझाने के लिए एनालिटिक्स (Analytics) का इस्तेमाल किया। लेकिन जल्द ही उन्हें एहसास हुआ कि जिस तर्क और विज्ञान से व्यापार को डिकोड किया जा सकता है, उसी से इंसान की नियति को भी समझा जा सकता है।

यह गहरी समझ उन्हें विरासत में मिली है। विश्व प्रसिद्ध जेमोलॉजिस्ट (Gemologist) और ज्योतिषी **डॉ. शेखर वशिष्ठ** (Ph.D., F.G.A., G.G.) के बेटे होने के नाते, गौरव की परवरिश एक ऐसे माहौल में हुई जहाँ विज्ञान और अध्यात्म एक ही भाषा में बात करते थे। उन्होंने अपने पिता के अथाह वैदिक ज्ञान को अपने तार्किक नज़रिए के साथ मिलाकर ज्योतिष को एक नया और आधुनिक रूप दिया।

लेकिन उनके भीतर एक गहरा, खामोश '**शायर**' भी पलता रहा। जहाँ उनका तार्किक दिमाग दुनिया और सितारों के रहस्य सुलझाता है, वहीं उनका यह रूप इंसान के सबसे नाज़ुक जज़्बातों, टूटने और खुद से मिलने के सफर को लफ़्ज़ों में पिरोता है।

लेखक की बात

बाहर से देखने पर यह दुनिया पूरी तरह से तार्किक (logical) दिखती है।

लेकिन इस तार्किक दुनिया के साथ-साथ, इंसान के अंदर एक ऐसी जगह भी है जिसे किसी भी विज्ञान से नहीं समझा जा सकता। दिनभर की मेहनत और काम काज के बाद, जब रात का सन्नाटा पसरता है, तो उसका सामना खुद से होता है। उसे एहसास होता है कि दिल के कुछ ज़ख्म और खालीपन ऐसे होते हैं, जिन्हे सिर्फ महसूस किया जा सकता है, और उन्हें सिर्फ लफ़्ज़ों के हवाले किया जा सकता है। यहीं से मेरे अंदर का **'शायर'** कागज़ पर उतरता है।

जब मैंने ज़िन्दगी के इस अनकहे हिस्से को पन्नों पर उतारना शुरू किया, तो मेरे अंदर एक गहरा शोर था। लेकिन जैसे-जैसे ये शायरियां मुकम्मल होती गईं, वो शोर खामोशी में बदलता गया।

जब आप इस किताब की आखरी शायरी तक पहुँचेंगे, तो मेरी उम्मीद है कि आप भी उस मुकाम पर होंगे जहाँ दुनिया का शोर आप तक नहीं पहुँचता, और आप खुद के लिए ही अपना सबसे महफूज़ घर बन चुके होते हैं।

आपका अपना,

गौरव वशिष्ठ

इस किताब में

I. इश्क़ की पहली दस्तक 1

1. पहली नज़र 2
2. नाम में क्या रखा है 4
3. तुम्हारी आदत 6
4. बातों का इश्क़ 8
5. वो एक मुस्कान 10
6. मिलने का बहाना 12
7. जब कोई अपना-सा लगे 14
8. तुम्हारे साथ साधारण भी ख़ास था 16
9. इश्क़ कब हुआ, पता ही नहीं चला 18
10. मोहब्बत का पहला डर 20

II. मोहब्बत — जब दो लोग एक दुनिया बनाते हैं 23

11. तुम्हारे साथ घर 24
12. तुम्हारी ख़ामोशी भी सुनता हूँ 26
13. तुम पास हो तो 28
14. तुम्हारी छोटी-छोटी बातें 30
15. तुम्हारे लिए बदलना नहीं, निखरना है 32
16. तुम्हें देखने की वजह 34
17. तुम्हारी आँखों में मेरा कल 36
18. इश्क़ में बराबरी 38
19. तुमसे बात करके अच्छा लगता है 40
20. अगर उम्र एक सफ़र है 42

III: अधूरी मोहब्बत 45

21. जो कभी हमारा हुआ ही नहीं 46
22. एकतरफ़ा इश्क़ 48

23. हम मिले, मगर हमारे नहीं हुए 50
24. सही इंसान, ग़लत वक़्त 52
25. तुम्हें चाहा, तुम्हें पाया नहीं 54
26. रिश्ते का नाम नहीं था 56
27. वो कहानी जो शुरू होने से पहले ख़त्म हो गई 58
28. तुम्हें खोया नहीं—कभी पाया ही नहीं 60
29. काश तुमने पूछा होता 62
30. हम दोनों अच्छे थे, साथ अच्छे नहीं थे 64

IV. जुदाई और ख़ामोशी 67

31. तुम्हारे जाने के बाद 68
32. आख़िरी बातचीत 70
33. कुछ रिश्ते आवाज़ के बिना मरते हैं 72
34. तुमने अलविदा कहा, मैंने मान लिया 74
35. तुम्हारी चैट अभी भी है 76
36. नंबर मिटाया, याद नहीं 78
37. हम बात नहीं करते, मगर सोचते हैं 80
38. आख़िरी बार मिलने की इच्छा 82
39. तुम्हारी कमी का कोई नाम नहीं 84
40. कुछ लोग जाते नहीं 86

V. तन्हाई - भीड़ में अकेला इंसान 89

41. भीड़ में अकेलापन 90
42. रात के दो बजे 92
43. किसी को बताना नहीं आता 94
44. मुस्कुराता हुआ आदमी 96
45. ऑनलाइन सब, पास कोई नहीं 98
46. ख़ुद से बातचीत 100
47. अकेले खाने की आदत 102
48. कमरे की ख़ामोशी 104
49. कुछ दर्द निजी होते हैं 106
50. हम अपनी ही नज़रों से छुपते रहे 108

VI. रिश्ते — प्रेम से बहुत आगे 111
51. माँ की थकान..... 112
52. पिता का प्यार..... 114
53. घर छोड़ते बच्चे..... 116
54. माँ-बाप बूढ़े होते देखना..... 118
55. भाई-बहन की लड़ाइयाँ..... 120
56. दोस्त जो परिवार बन गए..... 122
57. पुराने दोस्तों की तस्वीर..... 124
58. रिश्तेदारों के बीच अकेलापन..... 126
59. जो हमेशा हमारे लिए खड़ा रहा..... 128
60. घर की याद..... 130

VII. इंसान और उसकी ज़िंदगी..... 133
61. बचपन कहाँ चला गया..... 134
62. बड़े होने की कीमत..... 136
63. सपनों का बोझ..... 138
64. सफलता के बाद का खालीपन..... 140
65. असफलता से मुलाक़ात..... 142
66. दूसरों से तुलना..... 144
67. भागते हुए लोग..... 146
68. बहुत कुछ पा लिया, ख़ुद को खो दिया..... 148
69. उम्र बढ़ती रही..... 150
70. ज़िंदगी से एक सवाल..... 152

VIII. वो बातें जो हम कभी नहीं कहते..... 155
71. कुछ लोग..... 156
72. अजनबी दोस्त..... 158
73. बेनाम रिश्ता..... 160
74. दूर होकर भी पास..... 162
75. माँ भी एक इंसान है..... 164
76. पिता भी कभी बच्चे थे..... 166
77. बचपन की लड़ाई..... 168

78. कुछ दूरियाँ 170
79. अधूरा अलविदा 172
80. वक्त का फेर 174

IX. बेनाम एहसास 177
81. कहना कुछ और था 178
82. ख़ुशी में उदासी 180
83. पुराना ख़ुद 182
84. वो आवाज़ 184
85. अजनबी में ख़ुद 186
86. वो एक दिन 188
87. अचानक याद 190
88. बदलकर खोना 192
89. बे-वजह सुकून 194
90. आखिरी उम्मीद 196

X. ख़ुद से मुलाक़ात 199
91. मैं कौन हूँ? 200
92. ख़ुद को माफ़ करना 202
93. अपने पुराने रूप से मुलाक़ात 204
94. जो खोया, उसने सिखाया 206
95. अब किसी को साबित नहीं करना 208
96. देर से समझ आया 210
97. अब अकेले भी ठीक हूँ 212
98. ज़िंदगी से शिकायत कम हो गई 214
99. मैं अभी अधूरा हूँ 216
100. आख़िर में मैं 218
आखरी खत 220

I. इश्क़ की पहली दस्तक

1. पहली नज़र

भूमिका: इश्क़ कभी दरवाज़ा खटखटा कर नहीं आता। कभी-कभी किसी भीड़ में, एक अजनबी चेहरे की महज़ एक झलक हमारी अंदर की पूरी दुनिया को खामोशी से बदल कर रख देती है। यह नज़्म उसी पहली नज़र के जादू और उस मीठी सी उलझन के नाम है, जहाँ से इंसान खुद को भूलकर किसी और का होना शुरू कर देता है।

इस भारी भीड़ में, वो चेहरा जब दिखा,
मेरी साँसों का सफर, एक पल को रुका।
मेरी धड़कन मुझी से, अचानक आ उलझ गई,
मैं अपने ही वजूद, के आगे आज झुका।

मैं उस अजनबी का, नाम नहीं पूछ पाया,
बिना लफ़्ज़ों के निगाहों, ने सब कुछ सुनाया।
मेरा ये खामोश दिल, उसके ही साथ चला,
ना जाने उस नज़र, ने कैसा जादू चलाया।

उसकी वो झुकी नज़र, कर गई गहरा असर,
मेरे सूने से दिल, में बसा लिया घर।
मैंने खुद को सँभालने, की बहुत कोशिश की,
पर वो मीठी उलझन, बन गई मेरा सफर।

आज भी उस मोड़, पे जाती है नज़र,
ढूँढती है आज भी, तेरे होने का असर।
ये वक़्त तो बहुत, आगे निकल गया,
पर रह गया है वहीं, मेरी धड़कन का सफर।

एक नज़र का सफर, ये उम्र भर हुआ,
मैं जो अपना था, आज से उसका हुआ।
ना कोई वादा था, ना कोई पहचान थी,
मिली है मुझे आज, पहली नज़र की दुआ।



2. नाम में क्या रखा है

भूमिका: लोग अक्सर कहते हैं कि नाम में क्या रखा है, पर जब इश्क़ होता है, तो महबूब का नाम दुनिया का सबसे खूबसूरत लफ़्ज़ बन जाता है। वह नाम सिर्फ एक पहचान नहीं रहता, बल्कि एक पूरी की पूरी दुनिया, एक दुआ और धड़कन का हिस्सा बन जाता है। यह नज़्म उसी एक नाम के जादू और उसकी मीठी सी कशिश पर है।

दुनिया पूछती है अक्सर, नाम में क्या है रखा,
मैंने इस फलसफे को, कभी नहीं था परखा।
मेरे इस सूने ज़हन, में हुई तेरी दस्तक,
मैंने इन चंद लफ़्ज़ों, में अपना सुकून रखा।

महफ़िल में जब कोई, लेता है तेरा नाम,
मेरा ये बेचैन दिल, लेता है धड़कन थाम।
मुझे लगता है तुमने, दूर से मुझे पुकारा,
तेरी इस एक आवाज़, से महकती है हर शाम।

मेरी हर एक इबादत, में तेरा ज़िक्र है आता,
तू चाहे दूर रहे, तेरा नाम सुकून लाता।
मेरे होंठ खामोश रहें, पर धड़कन पुकारे तुझे,
तेरी इस मीठी आवाज़, से मेरा है रूहानी नाता।

कोरे कागज़ के पन्नों, पे तेरा नाम उतारूँ,
अपनी ही इन लकीरों, का नया मुकद्दर सँवारूँ।
ये महज़ कुछ लफ़्ज़ नहीं, हैं मेरी खामोश निशानी,
तेरे नाम के साये, में मैं ज़िंदगी गुज़ारूँ।

दुनिया के लिए तेरा नाम, महज़ तेरी एक पहचान,
पर मेरे लिए इसमें, बसती है मेरी जान।
लोग पूछते हैं मुझसे, नाम में क्या है रखा,
उन्हें क्या है खबर, तेरा नाम है मेरा जहान।



3. तुम्हारी आदत

भूमिका: इश्क़ हमेशा किसी तूफ़ान की तरह दस्तक नहीं देता। कभी-कभी यह दबे पाँव, एक आम सी आदत बनकर ज़िंदगी में इस कदर शामिल हो जाता है कि हमें खबर ही नहीं होती। सुबह की पहली चाय से लेकर रात के आखिरी खयाल तक, जब कोई शख्स आपकी दिनचर्या का सबसे ज़रूरी हिस्सा बन जाए—यह नज़्म उसी अनजानी और मीठी सी आदत के नाम है।

मुझे पता ना चला, कब तुम मेरी आदत बने,
मेरी इस सूनी ज़िंदगी, की कब तुम ज़रूरत बने।
मैं तो मुसाफिर था, जो चला तेरे साथ,
ना जाने तुम कब, मेरी हसीन मूरत बने।

अब सुबह जागते ही, ढूँढूँ मैं तेरा पैगाम,
अब हर अजनबी चेहरे, में ढूँढूँ तेरा ही नाम।
तुझसे बात ना हो, तो लगे दिन अधूरा,
तेरी मीठी बातों में, ढूँढूँ मैं अपनी शाम।

तू अगर पास नहीं, तो भी रहता है तेरा खयाल,
मेरी हर एक उलझन, में रहता है तेरा सवाल।
लगी है मीठी लत, जो मुझपे छा गई,
मेरा ये बेचैन दिल, पूछे बस तेरा हाल।

दुनिया कहती है आदतें, अक्सर जाती हैं छूट,
वक़्त की आंधी में, पुरानी राहें जाती हैं रूठ।
तेरी आदत मेरी रूह, की गहराई में ऐसी उतरी,
कि तेरे बिना तो अब, मेरी सांसें भी जाएँगी टूट।

मैं नहीं जानता सफर, मुझे अब कहाँ ले जाएगा,
तेरी आदत का नशा, कितना मुझपे अब छाएगा।
उम्र भर तेरी आदत, का बनूँ मैं गुलाम,
तेरे बिना मेरा दिल, कभी सुकूं ना पाएगा।



4. बातों का इश्क़

भूमिका: इश्क़ हमेशा किसी के हुस्न या चेहरे को देखकर नहीं होता। कभी-कभी किसी की बातों की गहराई, उनकी आवाज़ का जादू और उनके ख्यालों की खूबसूरती दिल में इस कदर उतर जाती है कि हम उनके लफ़्ज़ों से मोहब्बत कर बैठते हैं। यह नज़्म उसी 'बातों के इश्क़' के नाम है, जहाँ सूरत से पहले सीरत (mind/soul) से प्यार हो जाता है।

दुनिया तो मरती है, बस चेहरों के नाम,
मुझे मिल गया जैसे, तेरी बातों में मुकाम।
हुस्न का ये जादू, एक दिन टूट ही जाएगा,
तेरे मीठे से लफ़्ज़ों, से सजती है मेरी शाम।

तेरी इन मीठी बातों, का हुआ गहरा असर,
मेरी सूनी सी साँसों, को मिला नया सफर।
मेरी बेचैन सी रूह, को मिला है सुकून,
तेरी आवाज़ में बसता है, मेरी दुनिया का शहर।

मैंने तेरे ख्यालों में, पाई अपनी नई पहचान,
तेरे इन मीठे लफ़्ज़ों, में बसती मेरी जान।
लोग तो महज़ सूरत, पे दिल हार हैं जाते,
मैंने तेरी बातों में, देखा एक नया जहान।

तू जब नहीं होती, रहते हैं लफ़्ज़ पास,
मेरी इस तन्हाई को, है बस तेरा एहसास।
तेरी ये गहरी खामोशी, भी मुझसे बात करे,
तेरी आवाज़ बुझाती है, मेरी रूह की प्यास।

ये बातों का इश्क़, है जिस्मों के पार,
मेरी अपनी ही साँसों, पे तेरा ही इख्तियार।
जब तक धड़केगा दिल, मैं सुनूँगा तेरी बात,
मुझे तेरी इस सीरत, से हुआ सच्चा प्यार।



5. वो एक मुस्कान

भूमिका: कुछ मुस्कुराहटें ऐसी होती हैं जो सिर्फ होंठों तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि देखने वाले की रूह में उतर जाती हैं। इंसान तो लौट जाता है, मगर उसकी वो एक मुस्कान ज़हन में इस कदर ठहर जाती है कि अकेले में भी बेवजह मुस्कुराने का बहाना दे जाती है। यह नज़्म उसी जादुई और ना भूलने वाली मुस्कान के नाम है।

वो भरी महफ़िल में, दे गए एक सौगात,
मेरे इस सूने दिल, में जगे नए जज़्बात।
मेरे इस शांत दरिया, में उठी नई लहर,
उनके होंठों की मुस्कान, बदल गई मेरे हालात।

मैं जब भी तन्हा होता, सोचूँ बस उनका खयाल,
मेरे इस बेचैन दिल, का पूछे कोई हाल।
उनकी वो एक झलक, दे गई नया सुकून,
उनकी मीठी सी हंसी, कर गई गज़ब कमाल।

दुनिया की इस भीड़, पे नहीं है मेरी नज़र,
उनकी उस एक मुस्कान, पे रुका मेरा सफ़र।
जैसे किसी घने अंधेरे, में जली कोई नई रौशनी,
उनकी मीठी सी हंसी, का हुआ बहुत गहरा असर।

मैं बेवजह ही अकेले में, ढूँढूँ मुस्कुराने का बहाना,
उनकी उस मीठी याद, को दिल में है सजाना।
कोई पूछे इस खुशी, की आखिर क्या है वजह,
मेरा ख्वाब है उस मुस्कान, को अब अपना बनाना।

ये महज़ मुस्कान नहीं, है मेरी धड़कन का साज़,
उनकी इस खामोश हंसी, में छुपी नई आवाज़।
उनको शायद खबर नहीं, वो कर गए जादू,
उनकी इस एक मुस्कान, से हुआ नया आगाज़।



6. मिलने का बहाना

भूमिका: जब इश्क़ की शुरुआत होती है, तो दिल महबूब को देखने के लिए हर पल बेकरार रहता है। सीधे तौर पर मिलने की हिम्मत नहीं होती, इसलिए नादान दिल रोज़ नए-नए बहाने गढ़ता है। कभी किसी किताब के बहाने, तो कभी यूँ ही राहों में टकरा जाने की साज़िश। यह नज़्म उसी मासूम बेकरारी और मिलने के उन हसीन बहानों के नाम है।

मैं तुझसे मिलने का, ढूँढूँ रोज़ नया बहाना,
दिल की इस बेकरारी, को दुनिया से है छुपाना।
महज़ एक मुलाकात की, मन में उठी तलब,
मेरी इन कोशिशों को, ना समझे ये ज़माना।

मैं कोई पुरानी सी, माँगने आऊँ वो किताब,
मेरी इन साज़िशों का, ना हो कोई हिसाब।
मैं बस तेरे करीब, आने का करूँ प्रयास,
मैं झूठे सवालों का, ढूँढूँ तुझसे ही जवाब।

मैं अक्सर घर में, निकालूँ कोई झूठा काम,
बस तेरे ही करीब, पहुँचना हो मेरा मुकाम।
मैं बेवजह ही आऊँ, तेरे सामने कई बार,
इन मीठे बहानों में, ढल जाए मेरी शाम।

मैं अक्सर करूँ तुझसे, बहुत ही आम बात,
पर मेरी इस रूह, की होती एक मुलाक़ात।
तू ना समझे मेरी, इन मीठी साज़िशों को,
तेरे इसी खयाल में, कट जाए मेरी रात।

मेरे इन मीठे बहानों, में छुपी है साज़िश,
तुझे बस एक नज़र, देखने की है ख्वाहिश।
बिना कुछ भी बोले, करूँ प्यार का इज़हार,
मैं रब से रोज़ाना, करूँ बस ये गुज़ारिश।



7. जब कोई अपना-सा लगे

भूमिका: कभी-कभी ज़िंदगी की भीड़ में कोई ऐसा अजनबी टकरा जाता है, जिसे देखकर लगता ही नहीं कि हम पहली बार मिल रहे हैं। एक अनजाना सा सुकून, एक बेनाम सा जुड़ाव—जैसे रूह उसे सदियों से जानती हो। यह नज़्म उसी अनकहे एहसास और बिना किसी पहचान के महसूस होने वाले उसी मीठे से 'अपनेपन' के नाम है।

ज़माने की इस भीड़, में तुम आए पास,
मेरे इस वीरान दिल, को मिला नया एहसास।
हम एक दूजे के, लिए थे बिल्कुल अनजान,
पर कई जन्मों की, तुम ले आए आस।

तुमसे बात करते हुए, मिला अजब सा इत्मीनान,
तेरी इस अजनबी आवाज़, में बसा मेरा जहान।
ना कोई रिश्ता था, ना थी कोई डोर,
पर रूह का जैसे, तू था कोई पुराना मेहमान।

तुम्हारी इन बातों में, कैसी थी मीठी बात,
इस अजनबी चेहरे में, छुपी थी एक सौगात।
हम पहली बार बैठे थे, एक दूजे के करीब,
पर कई जन्मों की, लगी मुझे ये मुलाक़ात।

अपना ये हाल सुनाना, लगा मुझे बहुत आसान,
तेरी इस गहरी खामोशी, में दिखा नया आसमान।
उम्र भर साथ रहकर, लोग नहीं समझ पाते,
पर तुझसे जुड़कर जागे, मेरे कई नए अरमान।

ये कैसा जादुई रिश्ता, जिसका नहीं कोई नाम,
इस अजनबी से सुकून, का ना कोई मुकाम।
ये बस खुदा की, थी कोई हसीन साज़िश,
मेरी इस अधूरी तलाश, को मिला हसीन अंजाम।



8. तुम्हारे साथ साधारण भी ख़ास था

भूमिका: इश्क़ हमेशा किन्हीं बड़े वादों, महंगे तोहफों या चाँद-तारों की बातों में नहीं बसता। कभी-कभी सड़क किनारे पी गई एक कप चाय, बिना किसी मंज़िल के साथ चलना, रातों की लंबी बातें और सुकून भरी खामोशी—ये सब किसी के साथ इतने हसीन हो जाते हैं कि दुनिया की हर आम चीज़ भी बेहद ख़ास लगने लगती है। यह नज़्म उन्हीं छोटी-छोटी और साधारण सी बातों के असाधारण हो जाने के नाम है।

मेरी इन सूनी राहों, पे छाई थी वीरानी।
मेरी इस ज़िंदगी, की थी आम सी कहानी।
पर तेरे आते ही, बदल गए सारे रंग,
तेरे इस साथ से, मुझे मिली नई ज़िंदगानी।

सड़क किनारे वो चाय, और वो मीठी बात,
बिना किसी मंज़िल के, कट जाए मेरी रात।
हम दोनों चुपचाप बस, चलते रहें उम्र भर,
इन छोटे पलों में, जगे मेरे नए जज़्बात।

रातों की उन बातों, का हो गहरा असर,
तेरी आवाज़ से ही, तय हो मेरा सफ़र।
जब लफ़्ज़ कम पड़ें, खामोशी भी बात करे,
तेरे मीठे ख्यालों में, गुज़रे मेरा हर पहर।

मुझे चाँद तारे नहीं, ना चाहिए कोई आसमान,
तेरे साथ इन पलों, में बसा मेरा जहान।
इन झूठे वादों से, मुझे कोई मतलब नहीं,
बस तेरे साथ से, मिली मुझे नई पहचान।

ये दुनिया ढूँढती होगी, इश्क़ में कुछ ख़ास,
मुझे तो हसीन लगे, बस तेरा रहना मेरे पास।
लोग किताबी किस्सों में, ढूँढते होंगे नया जादू,
मेरे लिए कीमती है, तेरा ये प्यारा एहसास।



9. इश्क़ कब हुआ, पता ही नहीं चला

भूमिका: इश्क़ हमेशा किसी तूफ़ान की तरह शोर मचाते हुए नहीं आता। कभी-कभी यह एक मीठी सी भोर (सुबह) की तरह, बहुत दबे पाँव ज़िंदगी में दाखिल होता है। किसी से यूँ ही बात करते-करते, एक आम सी दोस्ती कब रूहानी मोहब्बत में बदल जाती है, इंसान को खबर ही नहीं होती। यह नज़्म उसी खामोश और आहिस्ता से होने वाले इश्क़ के नाम है।

जब हम पहली दफा मिले, कोई तूफ़ान नहीं उठा,
मेरे इस सूने दिल, में कोई ख्वाब नहीं जुड़ा।
तुम आहिस्ता से मेरी, आदतों में ढल गए,
मुझे खबर ना हुई, इश्क़ ये कैसे बढ़ा।

बातों ही बातों में, हर दिन गुज़रता गया,
तेरी सादगी का जादू, मुझपे यूँ उतरता गया।
मैं तो मान बैठा, थी ये महज़ दोस्ती,
मुझे खबर ना हुई, मैं कब सँवरता गया।

मैं तो अपनी दुनिया, में था बहुत मगन,
मेरे इस सूने दिल, को लगी तेरी लगन।
तेरी मीठी दस्तक ने, दिया मुझे नया सवेरा,
मुझे खबर ना हुई, कब जगी ये अगन।

अब तेरे बिना दिल, को नहीं आता करार,
मेरी इन धड़कनों पे, छाया तेरा ही खुमार।
वो हल्का सा लगाव, रूह में गया उतर,
मुझे खबर ना हुई, कब हुआ तुझसे प्यार।

दुनिया कहती है इश्क़, करता है भारी शोर,
रातों की नींदें चुरा, चलाता है अपना ज़ोर।
तेरी ये पाक़ मोहब्बत, आई बड़े दबे पाँव,
मुझे खबर ना हुई, कब खिंचा मैं तेरी ओर।



10. मोहब्बत का पहला डर

भूमिका: इश्क़ जब अपनी सबसे खूबसूरत मंज़िल पर पहुँचता है, तो दिल में एक अजीब सा डर पैदा होने लगता है। यह डर बेवफाई का नहीं होता, बल्कि उस बेपनाह खुशी को खोने का होता है। जब ज़िंदगी में पहली बार कोई चीज़ इतनी कीमती हो जाए कि उसके बिना जीने का खयाल ही रूह कंपा दे—यह नज़्म उसी मोहब्बत के पहले और मासूम डर के नाम है, जहाँ इंसान पहली बार खुद को कमज़ोर महसूस करता है।

जब से ज़िंदगी में, तेरा ये इश्क़ छाया।
मेरी सूनी दुनिया पे, तेरा ही खुमार आया।
मैं वो था जो, छिनने से ना डरा।
तुझे खोने के खयाल, ने मुझे बहुत डराया।

तुझे करीब पाकर भी, दिल अजब सा घबराए।
इस बेपनाह खुशी का, एहसास मुझे बहुत डराए।
कहते हैं इश्क़ देता, दुनिया में नया हौसला।
तुझे खोने का खयाल, मेरे सब हौसले हराए।

ज़माने की बुरी नीयत, की है मुझे खबर।
बदलते हुए इस वक़्त, से मुझे लगे डर।
मैं तो सह लेता, हर एक भारी तूफ़ान।
पर तेरे बिना सूना, मेरा हर एक सफ़र।

तेरी इन वफ़ाओं पे, ना हो कोई सवाल।
तेरे बिना जीने का, दिल को डराए खयाल।
पास जब दुनिया की, सबसे नायाब चीज़ हो।
उसे खोने के डर, से है बेचैन मेरा हाल।

मैं तो चाहता मुझे, उम्र भर ये डर सताए।
मेरी इन धड़कनों को, तेरे होने का बताए।
जो बेखौफ होते वो, इश्क़ में रहे तन्हा।
खोने का ये डर, मुझे तेरा ही बनाए।



II. मोहब्बत — जब दो लोग एक दुनिया बनाते हैं

11. तुम्हारे साथ घर

भूमिका: घर सिर्फ ईंट, पत्थर और दीवारों से नहीं बनता। घर वो एहसास है जहाँ पहुँचकर रूह को सुकून मिलता है, जहाँ इंसान अपनी सारी थकान भूल कर सिर्फ खुद हो सकता है। यह नज़्म उस महबूब के नाम है, जिसकी बाहों में, जिसकी बातों में, और जिसके साथ में एक मुकम्मल घर का एहसास होता है—जहाँ पहुँचकर सफर खत्म हो जाता है।

भटकते हुए इस दिल, को मिला नया ठिकाना।
पीछे छूट गया अब, ये अजनबी सा ज़माना।
मुद्दतों तक झेली मैंने, इस सफर की तन्हाई।
तेरी इन पनाहों में, मुझे अब हर पल बिताना।

तुम्हारे पास आते ही, मिटे मेरी हर थकान।
दुनिया की हर उलझन, सुलझाए तेरी एक मुस्कान।
मेरे इस सफर में, कैसा भी हो मंज़र।
तुम्हारे साये में मुझे, मिले एक मुकम्मल जहान।

वीरान इन रास्तों पे, एक लंबा वक़्त गुज़ारा।
हसीन मंज़िलों पे भी, मुझे अकेलेपन ने मारा।
डूबने को थी अब, मेरी उम्मीदों की कश्ती।
तेरी इन धड़कनों में, मिला रूह को किनारा।

तेरी ये मौजूदगी ही, मेरे लिए बड़ी राहत।
दुनिया की चीज़ों से, परे बस तेरी चाहत।
महलों और इमारतों का, अब मुझे नहीं शौक।
तेरे इस दिल में, रहना ही मेरी इबादत।

लोग पत्थरों से बनाएँ, अपना एक हसीन मकान।
सजी दीवारों में ढूँढें, अपनी ये झूठी शान।
उन्हें शायद इल्म नहीं, असली सुकूं बसे कहाँ।
तेरी इन पनाहों में, बसा मेरा मुकम्मल जहान।



12. तुम्हारी ख़ामोशी भी सुनता हूँ

भूमिका: सच्चे इश्क़ में हर बात को लफ़्ज़ों में बयां करना ज़रूरी नहीं होता। जब दो लोग एक-दूसरे को गहराई से समझ लेते हैं, तो उनकी खामोशियाँ भी आपस में बातें करने लगती हैं। बिना कुछ कहे ही एक-दूसरे के दिल का हाल जान लेना, मोहब्बत का सबसे हसीन और रूहानी मुकाम है।

तेरी ख़ामोशी भी मुझे, साफ़ सुनाई देती है,
इसमें भी मुझे मोहब्बत, दिखाई देती है।
लफ़्ज़ों की ज़रूरत तो, गैरों को पड़ा करती है,
मुझे तो तेरी हर धड़कन, गवाही देती है।

जब तू मेरे पास चुपचाप, बैठा होता है,
मेरा ये बेचैन दिल, सुकून से सोता है।
तेरे होंठ भले ही, कोई बात ना कहें मुझसे,
पर तेरा ये एहसास, मेरे दिल को मोहता है।

तेरी आँखों की नमी भी, बहुत कुछ कहती है,
मेरे दिल में तेरी याद, बनकर ये बहती है।
मैं तो तेरी हर अनकही, बात समझ लेता हूँ,
क्योंकि मेरी रूह में बस, तेरी ही जान रहती है।

तेरी इस ख़ामोशी को भी, पढ़ना मुझे आता है,
तेरा ये अनकहा सा इश्क़, मुझे बहुत भाता है।
दुनिया के शोरगुल में, मेरा दिल नहीं लगता,
तेरा यूँ चुप रहना भी, मुझे सुकून दे जाता है।

मैंने तेरी ख़ामोशी को, अपनी इबादत मानी है,
तेरी हर एक अनकही बात, मैंने दिल से जानी है।
लफ़्ज़ों में बयां हो जाए, वो इश्क़ ही क्या है,
हमारी तो ये ख़ामोशी ही, सबसे हसीन कहानी है।



13. तुम पास हो तो

भूमिका:जब इंसान तन्हा होता है, तो दुनिया की हर चीज़ बहुत आम और बेरंग सी लगती है। लेकिन जैसे ही वो ख़ास हमसफर साथ आकर खड़ा होता है, तो अचानक इन पुरानी सड़कों, रास्तों और नज़ारों में एक नया रंग भर जाता है। यह नज़्म उसी जादू के नाम है, जहाँ महबूब की मौजूदगी से पूरी दुनिया हसीन लगने लगती है।

तुम पास होते हो तो, ये दुनिया बदल जाती है,
मेरे इस वीरान दिल में, कोई शमा जल जाती है।
इन आम से रास्तों में भी, एक जादू सा लगता है,
और मेरी हर एक उलझन, खुद ही टल जाती है।

जब तुम साथ चलते हो, तो हवाएँ महकती हैं,
तुम्हारी एक मुस्कान से, ये फिज़ाएँ चहकती हैं।
मुझे अब इन नज़ारों से, कोई भी वास्ता नहीं,
बस तुम्हारे ही करीब आकर, धड़कनें बहकती हैं।

तुम्हारे साये में मुझे, अजब सुकून सा मिलता है,
मेरे इस मुरझाए मन में, कोई फूल सा खिलता है।
दुनिया की ये हर एक चीज़, बिल्कुल वही पुरानी है,
पर तुम्हारे होने से ही, मेरा ये मंज़र बदलता है।

रंग इन वादियों के, कुछ और गहरे लगते हैं,
तुम्हारे साथ ये पल, जैसे यहीं ठहरे लगते हैं।
इस अजनबी सी दुनिया से, मैं अक्सर घबराता था,
पर अब तुम्हारे इश्क़ के, मुझपे पहरे लगते हैं।

तुम्हारे पास होने से, ज़िन्दगी मुस्कुराती है,
मेरे अंदर की हर एक, उदासी छुप जाती है।
मुझे किसी और महफ़िल की, अब कोई दरकार नहीं,
तुम्हारी ये मौजूदगी ही, मेरी दुनिया सजाती है।



14. तुम्हारी छोटी-छोटी बातें

भूमिका: इश्क़ अक्सर बड़े-बड़े वादों या महँगे तोहफों में नहीं, बल्कि महबूब की बहुत छोटी-छोटी आदतों में बसता है। उनका बालों को सँवारना, बातों-बातों में रूठ जाना, या किसी खास अंदाज़ में मुस्कुराना—यही वो छोटी बातें हैं जो सीधे रूह में उतर जाती हैं। यह नज़्म उन्हीं मासूम अदाओं के नाम है, जो किसी को हमारा पूरी तरह दीवाना बना देती हैं।

तेरी छोटी-छोटी बातों में, मेरी जान बसती है,
तेरी एक हल्की मुस्कान पे, ये धड़कन हँसती है।
ज़माना ढूँढता है इश्क़ में, बड़ी-बड़ी सौगातें,
मेरी रूह तो बस तेरी, नादानियों को तरसती है।

बालों को बेवजह यूँ, उँगलियों में उलझाना,
बातों ही बातों में तेरा, वो हौले से शर्माना।
मैं इन छोटी अदाओं पे, अपना दिल हार बैठा हूँ,
तेरी हर एक हरकत पे, मेरा वजूद है दीवाना।

तेरी हर एक आदत में, कशिश बहुत गहरी है,
मेरी ये हर एक नज़र, तेरे चेहरे पे ठहरी है।
तू जो रूठ कर अक्सर, मुँह अपना फेर लेती है,
तेरी उस नादानी में भी, कोई सुबह सुनहरी है।

तेरी इन छोटी बातों का, मुझपे बहुत असर है,
इन्हीं हसीन यादों से, कटता मेरा सफ़र है।
तू चाहे कुछ भी ना कहे, अपने मीठे लफ़्ज़ों से,
तेरी हर एक हरकत में, मेरे सुकून की सहर है।

मुझे तेरी इन बातों की, अब एक हसीन आदत है,
तेरी हर एक छोटी हरकत, मेरे लिए इबादत है।
बड़े वादे और कसमें तो, ज़माने का दिखावा हैं,
तेरी इन छोटी बातों में, मेरी रूह की राहत है।



15. तुम्हारे लिए बदलना नहीं, निखरना है

भूमिका: सच्ची मोहब्बत की पहचान यह नहीं कि वो इंसान को पूरी तरह से बदल दे, बल्कि यह है कि वो उसे अंदर से निखार दे। जो इश्क़ शर्तों पर टिका हो और पहचान मिटा दे, वो कभी रूह का नहीं हो सकता। यह नज़्म उस पाकीज़ा (pure) मोहब्बत के नाम है, जहाँ महबूब हमें हम ही रहने देता है, बस एक बेहतर इंसान बना देता है।

मुझे तेरे लिए अपना, वजूद नहीं बदलना है,
मुझे बस तेरे साये में, मुकम्मल सा निखरना है।
वो इश्क़ ही क्या जो, मेरी पहचान मिटा डाले,
मुझे तेरी मोहब्बत से, हसीन होकर सँवरना है।

तू मेरी खामियों को भी, खुशी से अपनाता है,
तेरा ये पाकीज़ा सा इश्क़, दिल को बहुत भाता है।
लोग अक्सर बदल देते हैं, महबूब को अपने,
पर तेरे साथ मेरा असली, रंग निखर आता है।

तेरे साथ में रहकर ये, रूह आज़ाद रहती है,
मेरी हर एक ख़ामोशी भी, तुझसे बात कहती है।
तेरी नज़रों में मेरे लिए, बंदिशें नहीं होतीं,
ये मोहब्बत मेरी रग-रग में, सुकून बनकर बहती है।

तेरे पाकीज़ा इश्क़ ने ही, मुझे मुझ से मिलाया है,
मेरी हर एक नादानी को, बड़े प्यार से अपनाया है।
मुझे कोई और बनने की, ज़िद कभी ना की तूने,
तूने तो मेरे इस बिखरे, वजूद को सजाया है।

मुझे अब उम्र भर बस, तेरे ही साथ चलना है,
तेरी इन गहरी आँखों में, मुझे अब रोज़ ढलना है।
ज़माना चाहता है कि मैं, औरों की तरह बन जाऊँ,
मुझे तो बस तेरी नज़रों में, मुकम्मल सा निखरना है।



16. तुम्हें देखने की वजह

भूमिका: इश्क़ में महबूब का दीदार किसी इबादत से कम नहीं होता। दिल हर वक्त बस उन्हें ही देखना चाहता है, और इसके लिए नज़रें ना जाने कितने ही झूठे बहाने ढूँढ लेती हैं। छुप-छुप कर देखना और नज़रें मिलते ही चुरा लेना—यह नज़्म उसी मासूम सी चोरी और दीदार की बेताबी के नाम है।

तुझे देखने का मैं रोज़, नया बहाना ढूँढता हूँ,
तेरी आँखों में मैं अपना, कोई ठिकाना ढूँढता हूँ।
ज़माने की इन महफ़िलों से, मुझे अब वास्ता क्या है,
मैं तो बस तेरे चेहरे का, हसीन फसाना ढूँढता हूँ।

तेरा वो सामने आना, मुझे बेहाल करता है,
मेरा ये बेचैन सा दिल, कई सवाल करता है।
मैं चोरी-चोरी तुझको, निहारता हूँ इस कदर,
तेरा ये नूर मेरी रूह में, बड़ा कमाल करता है।

तुझे छुप कर निहारने की, अजब सी ये आदत है,
तेरा दीदार करना ही, मेरे लिए इबादत है।
भरी महफ़िल में भी मेरी, नज़र तुझपे ठहरती है,
तेरी एक झलक पाना ही, मेरी सबसे बड़ी चाहत है।

नज़र मिलते ही मेरा वो, नज़रें झुका लेना,
मुस्कुरा कर तेरी यादों को, सीने में छुपा लेना।
कोई पूछे जो मुझसे, इस दीवानगी की वजह,
तो बातों ही बातों में मेरा, बहाना बना लेना।

मेरी आँखों को तेरे सिवा, कुछ नज़र नहीं आता,
तेरे बिना मेरे दिल को, कोई सफ़र नहीं भाता।
मैं तो बेवजह ही तेरी, राहों से गुज़रता हूँ,
तुझे देखे बिना मेरा, एक भी दिन नहीं जाता।



17. तुम्हारी आँखों में मेरा कल

भूमिका: सच्ची मोहब्बत में आँखें सिर्फ आज का अक्स (reflection) नहीं दिखातीं, बल्कि वो आने वाले कल का आईना बन जाती हैं। जब आप किसी की नज़रों में झाँककर अपनी पूरी ज़िंदगी, अपना बुढ़ापा और अपना आने वाला हर कल महफूज़ देख लें, तो समझ लीजिए कि इश्क़ मुकम्मल हो गया है। यह नज़्म उसी हसीन कल और उम्र भर के साथ के नाम है।

तेरी आँखों में मुझे अपना, कल नज़र आता है,
मेरे हर एक दर्द का, हल नज़र आता है।
दुनिया की इन झूठी बातों से, मुझे वास्ता क्या,
मुझे तो तेरे साथ ही, हर पल नज़र आता है।

तेरी इन गहरी निगाहों में, मेरा जहान है,
मेरे इस बेचैन से दिल का, तू आसमान है।
ज़माने की इन फिक्रों में, मैं अब नहीं उलझता,
तेरी आँखों में ही तो मेरा, हर अरमान है।

मुझे तेरे साथ उम्र का, सफ़र बिताना है,
तेरे दिल के आशियाने में, घर बनाना है।
आने वाले कल से मुझे, कोई खौफ नहीं आता,
मुझे बस तेरी आँखों का, आईना सजाना है।

जब देखता हूँ खुद को, तेरी पनाहों में,
मुझे मेरी उम्र दिखती है, तेरी निगाहों में।
मेरी मंज़िल भी तू है, और मेरा कारवाँ भी तू,
मेरा हर एक कल महफ़ूज़ है, तेरी इन राहों में।

मेरा ये आज और कल, बस तेरे नाम है,
तेरी वफ़ाओं में ही मेरी, हर एक शाम है।
कोई और ख्वाब देखने की, ज़रूरत नहीं मुझे,
तेरी आँखों में ही मेरा, आखिरी मुकाम है।



18. इश्क़ में बराबरी

भूमिका: सदियों से हमें यही सिखाया गया है कि मोहब्बत का दूसरा नाम क़ुर्बानी है, जहाँ एक इंसान खुद को मिटा कर दूसरे को रोशन करता है। लेकिन सच्चा इश्क़ कभी किसी एक से सारे समझौते नहीं माँगता। मोहब्बत एक तराज़ू है, जहाँ दर्द, खुशी, वफ़ा और हक़—सब कुछ दोनों पलड़ों में बराबर बँटना चाहिए। यह नज़्म इश्क़ में उसी हसीन बराबरी और साझेदारी के नाम है।

इश्क़ में सिर्फ़ एक की, क़ुर्बानी नहीं होती,
किसी एक के ही हिस्से में, वीरानी नहीं होती।
ये तो दो रूहों का, एक बराबर का सौदा है,
एक के मिटने से मुकम्मल, कहानी नहीं होती।

कदम से कदम मिलाकर, चलना ही इश्क़ है,
एक-दूजे के दर्द में, ढलना ही इश्क़ है।
कोई एक ही क्यों सहे, हर सितम ज़माने का,
दोनों का एक साथ, सँवरना ही इश्क़ है।

सिर्फ एक ही क्यों हमेशा, समझौता किया करे,
ज़माने के हर ज़हर को, तन्हा ही पिया करे।
ये मोहब्बत तो दोनों का, बराबर का हक़ है,
तो एक ही क्यों हमेशा, ये दर्द जिया करे।

मेरे हर एक दर्द का, तू बराबर का हक़दार है,
तेरी इन वफ़ाओं पे मेरा, पूरा एतबार है।
हम दोनों ने मिलकर ही, सजाई है ये दुनिया,
इस रिश्ते में दोनों का, बराबर का प्यार है।

एक-दूजे का सहारा, बनना ही इबादत है,
बराबर की साझेदारी में, सच्ची हिफ़ाज़त है।
यहाँ कोई किसी से, ना कम है ना ही ज़्यादा,
इस बराबरी में ही बसती, रूह की राहत है।



19. तुमसे बात करके अच्छा लगता है

भूमिका: दुनिया की सबसे खूबसूरत बात हमेशा कोई गहरी या समझदारी वाली बात नहीं होती। कभी-कभी बस दिन भर की थकान के बाद, अपने हमसफ़र से बेवजह की बातें करना ही दुनिया का सबसे बड़ा सुकून होता है। वो क्या कह रहे हैं, इससे फर्क नहीं पड़ता; फर्क बस इस बात से पड़ता है कि वो बोल रहे हैं और हम सुन रहे हैं। यह नज़्म उसी सीधे और सादे से एहसास के नाम है।

मुझे हर पल तुमसे बातें, करना अच्छा लगता है,
तेरे लफ़्ज़ों की मीठी बारिश में, उतरना अच्छा लगता है।
ज़माने की किसी महफ़िल में, मेरा दिल अब नहीं लगता,
मुझे बस तेरी आवाज़ पे, ठहरना अच्छा लगता है।

तेरी बातों का जादू, मेरे दिल को बहुत भाता है,
मेरा हर एक दर्द, तेरी आवाज़ से सो जाता है।
तेरी बिना मतलब की बातों में भी, जाने क्या सुकून छुपा है,
तेरा यूँ कुछ भी कहना, मेरा दिल बहला जाता है।

तेरी आवाज़ को चुपचाप, बस सुनना अच्छा लगता है,
तेरे साथ इन मीठे ख्वाबों को, बुनना अच्छा लगता है।
मुझे दुनिया की इन उलझनों से, कोई वास्ता नहीं है,
मुझे तो बस तेरे साथ, वक़्त बिताना अच्छा लगता है।

तेरी हर एक बात मुझे, लगती है मेरी कहानी,
तेरे लफ़्ज़ों में बसती है, मेरे इश्क़ की निशानी।
तू चाहे कुछ भी बोले, या रूठ भी जाए मुझसे,
तेरी आवाज़ से ही चलती है, मेरी ये ज़िंदगानी।

मुझे तुमसे बात करके, अजब सुकून आता है,
मेरे अंदर का हर एक खौफ, कहीं छुप जाता है।
मैं सारी उम्र बस तेरी, ये सादी बातें सुनता रहूँ,
तेरे इन लफ़्ज़ों में ही मेरा दिल, अपनी जन्नत पाता है।



20. अगर उम्र एक सफ़र है

भूमिका: ज़िंदगी अगर एक लंबा सफ़र है, तो सबसे हसीन ख्वाब यही है कि ढलती हुई उम्र में भी किसी का हाथ हमारे हाथ में हो। उम्र के साथ चेहरे पर झुर्रियां आ सकती हैं, लेकिन सच्चा इश्क़ कभी बूढ़ा नहीं होता। यह नज़्म उसी हसीन ख्वाब और उम्र भर के साथ के नाम है, जहाँ हम अपने हमसफ़र के साथ पूरी ज़िंदगी का सफ़र खुशी से तय करना चाहते हैं।

अगर उम्र भर का, ये हसीन सफ़र है,
तो तेरे ही पहलू में, मेरा ये घर है।
मुझे और किसी चीज़ की, चाहत नहीं है,
जिधर तू चले बस, मेरी वो डगर है।

बुढ़ापे की शामों में, तेरा साथ पाना,
तेरे ही साये में, ये उम्र बिताना।
बदल जाए चाहे, ये ज़माना सारा,
मुझे तो बस तेरा, हमसफ़र है कहलाना।

मेरे चेहरे पे जब, बुढ़ापा आएगा,
तेरा ये इश्क़ मुझे, और भी भाएगा।
भले उम्र की शाम, कितनी भी ढल जाए,
पर ये दिल सदा, तेरा ही कहलाएगा।

मैं ढलती हुई उम्र में, तेरे साथ रहूँगा,
तेरे हर एक दर्द को, मैं हँस के सहूँगा।
हाथों में तेरा हाथ, यूँ ही थामे हुए,
मैं आखिरी साँस तक, तुझे जान कहूँगा।

अगर मेरी साँसों का, आखिरी मुकाम हो,
तो मेरे इन होंठों पे, बस तेरा ही नाम हो।
तेरी बाँहों में ही, मैं अपनी आँखें मूँद लूँ,
मेरी इस ज़िंदगी की, वो सबसे हसीन शाम हो।



III: अधूरी मोहब्बत

21. जो कभी हमारा हुआ ही नहीं

भूमिका: दुनिया का सबसे अजीब दर्द वो होता है, जब हम उस इंसान को खोने पर रोते हैं, जो हकीकत में कभी हमारा था ही नहीं। वो इश्क़ जो कभी किसी वादे या रिश्ते में नहीं बँधा, लेकिन दिल के किसी कोने में पूरी तरह बस चुका था। यह नज़्म उसी बेनाम सी तकलीफ के नाम है, जहाँ इंसान उस चीज़ को खोने का मातम मनाता है जिसे उसने कभी पाया ही नहीं था।

जो मुकद्दर में मेरे, कभी आया नहीं,
जिसने मुझपर कोई हक़, जताया नहीं।
उसे खोने का गम, मैं मनाता हूँ क्यूँ,
जिसने यादों में अपनी, बसाया नहीं।

मैंने ख्वाबों में उसको, सजा कर रखा,
अपनी पलकों पे उसको, बिठा कर रखा।
पर हकीकत में मेरा, वो कुछ भी न था,
मैंने झूठा ही रिश्ता, बना कर रखा।

मैंने अपना उसे कभी, पाया ही नहीं,
मुझ पे उसने कोई हक़, जताया ही नहीं।
मैं तो बस दूर से ही, उसे देखता था,
मेरे हिस्से में उसका, वो साया ही नहीं।

बिना पाए ही उसको, गँवाता हूँ मैं,
एक अजनबी पे ये जाँ, लुटाता हूँ मैं।
वो तो मेरी कहानी का, हिस्सा न था,
यूँ ही खुद को हमेशा, सताता हूँ मैं।

ये अजीब सी मेरी, कहानी है बस,
इन आँखों में दर्द का, पानी है बस।
जिसे पाया नहीं, उसे खोने का खौफ,
मेरे अधूरेपन की, निशानी है बस।



22. एकतरफ़ा इश्क़

भूमिका: एकतरफ़ा इश्क़ दुनिया का सबसे पाक और निस्वार्थ जज़्बा है, क्योंकि इसमें कोई शर्त या उम्मीद नहीं होती। किसी को बिना उसे पाए, बिना कोई हक़ जताए, सिर्फ खामोशी से चाहना—ये हर किसी के बस की बात नहीं। इसमें ना तो दिल टूटने का डर होता है और ना ही किसी बेवफाई का खौफ। यह नज़्म उसी सुकून भरे और इबादत जैसे इश्क़ के नाम है, जो सिर्फ अपने आप में मुकम्मल होता है।

ये एकतरफ़ा मेरा, जो एहसास है,
मेरे जीने की बस, यही आस है।
उसे इल्म भी नहीं, मेरी दीवानगी का,
वो दूर होकर भी मेरे, बहुत पास है।

मैंने उसको खुदा, अपना माना है,
दिल की धड़कन ने उसको, ही जाना है।
वो मेरे इश्क़ से, बेखबर ही रहा,
पर मेरे लिए वो, मेरा पूरा ज़माना है।

मुझे उसपे कोई हक़, जताना नहीं,
उसे अपने दिल का, हाल बताना नहीं।
वो मेरी खामोशी को, समझे ना समझे,
मुझे लफ़्ज़ों से उसको, बुलाना नहीं।

ये तो रूहों का एक, खामोश नाता है,
जो मुझे उसके दर पे, ले आता है।
वो भले ही मेरी, तरफ ना देखे,
पर मेरा ये दिल, उसे ही चाहता है।

मेरे एकतरफ़ा इश्क़ का, ये उसूल है,
उसकी हर एक बेरुखी भी, कबूल है।
वो भले ही कभी, मेरा हो ना सका,
पर उसे चाहना मेरी, सबसे हसीन भूल है।



23. हम मिले, मगर हमारे नहीं हुए

भूमिका: ज़िंदगी में कई बार हम उस इंसान से मिलते हैं जो हमारे लिए ही बना होता है, लेकिन वक़्त और हालात हमारे खिलाफ होते हैं। दो लोग जो एक-दूसरे को गहराई से समझते हैं, करीब आते हैं, लेकिन कभी एक नहीं हो पाते। यह नज़्म उसी हसीन मगर अधूरी मुलाकात के नाम है, जहाँ मिलना तो मुकद्दर था, लेकिन उम्र भर साथ रहना नहीं। इसमें कोई धोखा नहीं है, बस वक़्त की एक खामोश साज़िश है।

साथ कुछ दूर तक, हम चले तो सही,
एक दूजे के साये में, ढले तो सही।
पर नसीबों में अपना, मिलन ही न था,
ख्वाब आँखों में कुछ पल, पले तो सही।

पास आकर भी हम, दूर होते गए,
मिल के भी एक दूजे को, खोते गए।
वक़्त की ये कैसी, अजीब चाल थी,
हम हकीकत में बस, ख्वाब बोते गए।

एक पल के लिए, वो मेरा हो गया,
फिर अचानक से जाने, कहाँ खो गया।
हम मिले थे मगर, कुछ लकीरें न थीं,
वक़्त जैसे कोई, गहरी नींद सो गया।

रास्ते मिल गए, मंज़िलें खो गईं,
जागती आँखें फिर, दर्द में रो गईं।
हम किनारे थे दो, जो मिले ही नहीं,
ख्वाहिशें बस समंदर की, हो गईं।

ये कहानी हमारी, अधूरी रही,
पास होकर भी कितनी, ये दूरी रही।
हम मिले तो मगर, हम हमारे न थे,
जाने दोनों की क्या, मजबूरी रही।



24. सही इंसान, ग़लत वक़्त

भूमिका: कभी-कभी ज़िंदगी में हम बिल्कुल सही इंसान से टकराते हैं—वो इंसान जो हमारे हर खयाल, हर ज़ज़्बात को बिना कहे समझ लेता है। लेकिन तब तक वक़्त की सुइयाँ बहुत आगे या बहुत पीछे निकल चुकी होती हैं। इसमें ना तो इंसान की गलती होती है और ना ही इश्क़ की, सारी साज़िश सिर्फ इस वक़्त की होती है। यह नज़्म उसी दर्द के नाम है, जहाँ मोहब्बत मुकम्मल होने के लिए सब कुछ सही था, बस वक़्त ही ग़लत था।

वो सही था मगर, वक़्त अपना न था,
ये हकीकत थी, कोई सपना न था।
हम मिले थे बहुत ही, गलत मोड़ पर,
साथ चलने का कोई, बहाना न था।

वो सही था मगर ये, तकदीर थी,
हमारे नसीबों की, ज़ंजीर थी।
हम दोनों के दिल तो, जुड़े थे मगर,
हाथों में न मिलने की, लकीर थी।

मुझे उसकी चाहत पे, ऐतबार था,
मेरी रूह को भी, मिला करार था।
पर ये वक़्त हमसे, खफ़ा ही रहा,
गलत दौर में ही, हुआ प्यार था।

हम एक-दूजे से, बहुत मजबूर थे,
ये वक़्त के जाने क्या, दस्तूर थे।
मोहब्बत तो दोनों की, पाकीज़ा थी,
हम पास रहकर भी, कितने दूर थे।

यही बस हमारी, कहानी रही,
अधूरी सी दिल की, रवानी रही।
वो इंसान बिल्कुल, सही था मगर,
गलत वक़्त की ही, मनमानी रही।



25. तुम्हें चाहा, तुम्हें पाया नहीं

भूमिका: सच्ची चाहत की सबसे बड़ी कसौटी यही है कि किसी को बिना पाए भी उम्र भर सिर्फ उसी का होकर रहा जाए। जब किसी को पाने की ज़िद खत्म हो जाती है, और सिर्फ उसे चाहने का सुकून बाकी रह जाता है, तब इश्क़ एक इबादत बन जाता है। यह नज़्म उस पाकीज़ा मोहब्बत के नाम है, जहाँ इंसान अपने महबूब को ज़माने से नहीं माँगता, बल्कि अपनी रूह में महफूज़ कर लेता है।

तुझे चाहा मगर, कभी पाया नहीं,
तेरी यादों को दिल से, मिटाया नहीं।
मैं कैसे किसी और, का हो सकूँ,
मेरे दिल को कोई और, भाया नहीं।

तुझे दूर से ही, निहारा है बस,
तेरी यादों से खुद को, सँवारा है बस।
तुझे माँगने की, न ज़िद की कभी,
मेरी रूह ने तुझको, पुकारा है बस।

तेरा हो ही जाऊँ, ये ज़िद तो नहीं,
तुझे पा लूँ मैं ये, मक़सद तो नहीं।
मैं खामोश रहकर भी, तेरा ही हूँ,
मेरे इश्क़ की कोई, सरहद तो नहीं।

बिना पाए तुझको, ये माना है बस,
तेरी रूह को अपना, जाना है बस।
तुझे पाने की मुझको, तलब ही नहीं,
तेरी यादों को दिल में, सजाना है बस।

कभी मैंने तुझको, बुलाया नहीं,
कोई हक़ भी तुझपे, जताया नहीं।
तुझे चाहना ही, सुकून है मेरा,
भले मैंने तुझको, कभी पाया नहीं।



26. रिश्ते का नाम नहीं था

भूमिका: दुनिया हर रिश्ते को किसी न किसी नाम में बाँधना चाहती है—दोस्त, प्रेमी, हमसफ़र। लेकिन कुछ रिश्ते इन सारे दायरों से बहुत बड़े होते हैं। उनके बीच कोई कागज़ी या सामाजिक रिश्ता नहीं होता, फिर भी रूह का जुड़ाव सबसे गहरा होता है। यह नज़्म उसी बेनाम मगर बेहद खूबसूरत रिश्ते के नाम है, जिसे समाज भले ही न समझे, लेकिन दो दिलों के लिए वही पूरी दुनिया होता है।

हमारे इस रिश्ते का, कोई नाम नहीं था,
ज़माने की नज़रों में, ये आम नहीं था।
हम दोनों जुड़े थे, बस खामोशी से,
इस बेनाम रिश्ते का, कोई मुकाम नहीं था।

ना वादे किए थे, ना कसमें ही खाईं,
ना दुनिया की हमने, रस्में निभाईं।
बस रूहों का आपस में, एक राब्ता था,
न झूठी तसल्ली, न बातें बनाईं।

ना मैंने कभी तुमको, अपना बताया,
ना तुमने कभी मुझपे, ये हक़ जताया।
हम एक-दूजे के लिए, थे बहुत खास,
पर इस गहरे एहसास को, हमने सबसे छुपाया।

ना मिलने का वादा, ना बिछड़ने का डर था,
ये बेनाम रिश्ता ही, अपना वो घर था।
भले कागज़ों पे, कोई मोहर न थी,
पर एक-दूजे की रूह पे, पूरा असर था।

ये बेनाम सा रिश्ता, महकता ही रहा,
ये जज़्बात दिल में, धड़कता ही रहा।
किसी नाम की इसको, ज़रूरत न थी,
ये खामोश दरिया सा, बहता ही रहा।



27. वो कहानी जो शुरू होने से पहले ख़त्म हो गई

भूमिका: जब कोई लंबा रिश्ता टूटता है, तो इंसान उन यादों के लिए रोता है जो उसने साथ बिताई थीं। लेकिन सबसे अजीब और खामोश दर्द वो होता है, जब हम उस इंसान और उस कहानी के लिए रोते हैं, जो हकीकत में कभी शुरू ही नहीं हुई। यह मातम किसी चीज़ के टूटने का नहीं, बल्कि उन हसीन संभावनाओं (possibilities) के छिन जाने का है, जो हो सकती थीं। यह नज़्म उसी दर्द के नाम है, जहाँ हम उन यादों को खो देते हैं जो हम कभी बना ही नहीं पाए।

वो एक दास्ताँ जो, लिखी ना गई,
वो एक बात जो होंठों से, कही ना गई।
शुरू होने से पहले ही, जो खतम हो गई,
वो एक उम्र जो साथ, कभी जी ना गई।

अभी लफ़्ज़ होंठों पे, आए न थे,
अभी ख्वाब पलकों पे, छाए न थे।
कहानी तो पहले ही, दम तोड़ गई,
अभी हमने अरमां, सजाए न थे।

न मिल पाने का वो, एक एहसास है,
बिना कुछ पिए ही, जो एक प्यास है।
अभी तो चले भी न थे, साथ दो कदम,
मगर टूट गई जो, वो एक आस है।

वो उम्मीद जो दिल को, सताती रही,
वो एक याद जो खामोश, रुलाती रही।
बिना शुरू हुए जो, कहानी मिटी,
वो कशिश हमको अक्सर, बुलाती रही।

ये कैसी कहानी, जो अधूरी रही,
हमारे ही दरमियां, ये दूरी रही।
उसे कैसे खोया, जो पाया न था,
बस उस हसीन मुकाम की, मजबूरी रही।



28. तुम्हें खोया नहीं—कभी पाया ही नहीं

भूमिका: दुनिया में सबसे ज़्यादा खौफ किसी को खोने का होता है। लेकिन जब आप यह गहराई से समझ लेते हैं कि जो इंसान कभी आपका था ही नहीं, उसे आप भला खो कैसे सकते हैं? यह एहसास इंसान को एक अजीब सा सुकून देता है। यह नज़्म दर्द की नहीं, बल्कि उस परिपक्वता (maturity) की है, जहाँ हम यह मान लेते हैं कि न पाने की कोई हसरत बची है, न खोने का कोई खौफ।

तुम्हें खोने का कोई, मलाल अब नहीं,
बिछड़ने का दिल में, सवाल अब नहीं।
जिसे मैंने कभी भी, पाया न था,
तो फिर टूटने का, खयाल अब नहीं।

तुझे खोने का डर अब, सताता नहीं,
ये खालीपन मुझको, अब रुलाता नहीं।
जिसे हक़ से मैंने, छुआ तक नहीं,
उसे याद करके दिल, घबराता नहीं।

शिकायत मुझे अब, ज़माने से क्या,
गिला कोई गुज़रे, फसाने से क्या।
जिसे मैंने कभी भी, पुकारा न था,
उसे रूठने या, मनाने से क्या।

तुझे मैंने तो सच में, गँवाया नहीं,
कोई हक़ भी तुझपे, जताया नहीं।
तुझे खोने का दुख मैं, भला क्या करूँ,
जब मैंने तुझे कभी, पाया नहीं।

ये कैसी मेरी एक, अजीब जीत है,
बिना साज़ के ही, जो एक गीत है।
न पाने की हसरत, न खोने का गम,
यही मेरे इश्क़ की, अब रीत है।



29. काश तुमने पूछा होता

भूमिका: जब रिश्ते टूटते हैं तो हमेशा कोई बड़ी वजह, धोखा या झगड़ा नहीं होता। कई बार रिश्ते महज़ एक खामोशी की वजह से खत्म हो जाते हैं। एक इंसान इस इंतज़ार में रहता है कि कोई उसे रोके, उसके दिल का हाल पूछे, और दूसरा इंसान अपनी ही उलझनों में खामोश रह जाता है। यह नज़्म उस 'काश' के नाम है, जहाँ सब कुछ बच सकता था, अगर किसी ने महज़ एक सवाल पूछ लिया होता। वो अनकहे लफ़्ज़ और वो अनपूछे सवाल, अक्सर बिछड़ने की सबसे बड़ी त्रासदी होते हैं।

मेरी खामोशियों को, तुमने सुना ही नहीं,
मेरे एहसास को तुमने, चुना ही नहीं।
काश तुमने मेरी आँखों में, कभी झाँका होता,
मेरे ख्वाबों को तुमने, बुना ही नहीं।

मैं तो वापस पलट कर, जरूर लौट आता,
अपने दिल का हर दर्द, तुम्हें बताता।
काश तुमने कोई सवाल, पूछा तो होता,
मैं खुलकर, तुमको सब बताता।

मेरी उलझन को तुम जो, समझते कभी,
इन खयालों में ऐसे न, उलझते कभी।
काश तुमने मुझे पास, बुलाया तो होता,
ये उलझे हुए रिश्ते, तब सुलझते कभी।

एक सवाल से ही सब, हल हो जाता,
ये अधूरा फसाना, मुकम्मल हो जाता।
काश तुमने मेरा नाम, पुकारा होता,
अपना भी कोई हसीन, कल हो जाता।

दिल का हर एक ज़ज़्बात, चुप रह गया,
मेरे अश्कों के पानी में, बह गया।
काश तुमने ज़रा सा भी, पूछा होता,
मैं तो आँखों ही आँखों में, सब कह गया होता।



30. हम दोनों अच्छे थे, साथ अच्छे नहीं थे

भूमिका: हर टूटते रिश्ते में कोई बेवफ़ा या गुनहगार नहीं होता। ज़िंदगी का सबसे कड़वा मगर परिपक्व सच यह है कि कई बार दो लोग अपनी-अपनी जगह पर बिल्कुल सही और बहुत अच्छे इंसान होते हैं, लेकिन उनका साथ होना मुकद्दर में नहीं होता। यह नज़्म उसी गरिमा (dignity) के नाम है, जहाँ बिछड़ते वक़्त कोई इल्ज़ाम नहीं होता, कोई नफरत नहीं होती, बस एक खामोश सी सच्चाई होती है कि हम दोनों अच्छे थे, मगर हमारा साथ अच्छा नहीं था।

एक दूजे को हम, समझ ना सके,
साथ मिलकर ये रिश्ते, सँभल ना सके।
हम इंसान दोनों, तो अच्छे थे पर,
एक साँचे में हम, कभी ढल ना सके।

न तू बेवफ़ा था, न मैं बेवफ़ा,
ये हालात ही हमसे, थे कुछ खफ़ा।
हम इंसान दोनों, तो अच्छे ही थे,
मगर साथ अपना, न था इस दफ़ा।

तेरा भी नज़रिया, था बिल्कुल सही,
मेरा भी नज़रिया, था बिल्कुल सही।
कोई भी यहाँ पर, गुनहगार न था,
मगर साथ चलने की, सूरत न रही।

कोई दिल में अपने, बगावत न थी,
एक दूजे से कोई, शिकायत न थी।
हम अच्छे थे दोनों ही, अपनी जगह,
मगर साथ रहने की, किस्मत न थी।

मुबारक तुझे अब, ये तेरा सफ़र,
मुबारक मुझे अब, ये मेरी डगर।
हम इंसान दोनों ही, नायाब थे,
मगर साथ अपना, न था उम्र भर।



IV. जुदाई और ख़ामोशी

31. तुम्हारे जाने के बाद

भूमिका: जब कोई अपना दूर चला जाता है, तो दुनिया रातों-रात नहीं बदलती। सूरज रोज़ निकलता है, लोग अपने काम पर जाते हैं, और वक़्त अपनी पुरानी रफ़्तार से चलता रहता है। लेकिन अंदर ही अंदर, सब कुछ बदल चुका होता है। यह नज़्म उस खामोश बदलाव के नाम है, जहाँ तुम्हारे जाने के बाद दुनिया बाहर से तो वैसी ही है, मगर अंदर से अब पहले जैसी कोई बात नहीं रही।

तुम्हारे जाने के बाद, दुनिया वही रही,
हर एक बात लोगों की, सुनी-अनसुनी रही।
हालात ज़िन्दगी के, तो वैसे ही हैं मगर,
मेरे दिल की ज़मीन पे, हमेशा कोई कमी रही।

हवाएं आज भी वैसी, चलती तो हैं यहाँ,
ये रौनकें भी शहर की, सजती तो हैं यहाँ।
तुम्हारे जाने से कुछ भी, रुका तो है नहीं,
मगर मेरी ये आँखें, तरसती तो हैं यहाँ।

किताबों के पन्नों में, अब वो बात नहीं,
मेरे हाथों में अब, तेरा वो हाथ नहीं।
मुस्कुरा लेता हूँ मैं, ज़माने को देखकर,
मगर मेरे अंदर अब, वो जज़्बात नहीं।

मेरे घर की फिज़ा में, एक सूनापन है,
मेरे दिल के हर कोने में, अकेलापन है।
लोग कहते हैं मैं, अब भी हँसता बहुत हूँ,
मगर मेरी हर हँसी में, एक खालीपन है।

तुम्हारे जाने से दुनिया, थमी तो नहीं,
इन आँखों में अश्कों की, नमी तो नहीं।
बस एक रंग सा उड़ गया, मेरी ज़िन्दगी से,
मुझे और किसी चीज़ की, कमी तो नहीं।



32. आख़िरी बातचीत

भूमिका: ज़िंदगी की सबसे बड़ी त्रासदी यह है कि हमें कभी पता नहीं होता कि हमारी किसी से होने वाली बातचीत आख़िरी है। हम बहुत आम तरीके से हँसते हैं, बातें करते हैं और अलविदा कह देते हैं, यह सोचकर कि कल फिर बात होगी। लेकिन जब वो कल कभी नहीं आता, तो उस आख़िरी बातचीत का एक-एक लफ़्ज़ हमारे ज़ेहन में छप जाता है। यह नज़्म उसी अनजानी आख़िरी गुफ़्तगू के नाम है, जो उम्र भर की याद बन जाती है।

मुझे क्या पता था, वो आख़िरी बात थी,
वो साथ अपने गुज़री, एक आख़िरी रात थी।
हम हँस कर मिले थे, बड़े आम से,
न जाना जुदाई की, वो शुरुआत थी।

न कोई इशारा था, न आहट कोई,
न माथे पे तेरे, थी सिलवट कोई।
मुझे क्या खबर थी, कि तुम जाओगे,
तुम्हारी बातों में न थी, घबराहट कोई।

वो लफ़्ज़ों का गहरा, असर रह गया,
मेरे दिल में उसी का, एक घर रह गया।
बहुत आम सी थी, वो अपनी गुफ़्तगू,
मगर उम्र भर का, सफ़र रह गया।

मैं अक्सर वो बातें, दोहराता हूँ अब,
अकेले में खुद को, समझाता हूँ अब।
अगर जानता वो, है आख़िरी पल,
ये सोचकर अक्सर, सहम जाता हूँ अब।

वो आख़िरी बातचीत, मेरी अमानत है,
मेरे इश्क़ की वो, हसीन विरासत है।
तुम्हारे वो लफ़्ज़, जो, ठहर से गए,
मेरे लिए तो अब, वो इबादत है।



33. कुछ रिश्ते आवाज़ के बिना मरते हैं

भूमिका: जब कोई रिश्ता किसी धोखे या बड़ी लड़ाई की वजह से टूटता है, तो दिल में एक आग होती है, एक वजह होती है। लेकिन ज़िंदगी का सबसे उदास सच यह है कि कई रिश्ते बिना किसी शोर के, बिना किसी झगड़े के बस चुपचाप मर जाते हैं। दो लोग बात करना कम कर देते हैं, फिर मिलना कम कर देते हैं, और एक दिन पूरी तरह से अजनबी बन जाते हैं। कोई इल्ज़ाम नहीं होता, कोई शिकायत नहीं होती—बस एक खामोशी होती है जो रिश्ते को निगल जाती है। यह नज़्म उसी खामोश जुदाई के नाम है।

कोई दिल में अपने, गिला ही न था,
बिछड़ने का कोई, सिला ही न था।
हम खामोश रहकर, जुदा हो गए,
रंजिश का कोई, सिलसिला ही न था।

न तुमने ही कोई, शिकायत रखी,
न मैंने ही दिल में, कड़वाहट रखी।
ये दूरियां दोनों के, दरमियां आ गईं,
बस होंठों पे अपने, शराफत रखी।

लफ़्ज़ों के धागे, उलझने लगे,
ये रिश्ते भी धीरे से, बुझने लगे।
न तुमने ही टोका, न मैंने कहा,
हम अपनी ही हदों में, सिमटने लगे।

जुदाई का कोई, निशान ही न था,
लफ़्ज़ों में दर्द का, बयान ही न था।
हम चुपचाप रहकर, अलग हो गए,
बिछड़ने का कोई, गुमान ही न था।

बिना शोर के रिश्ते, जो मर गए,
वो चुपचाप नज़रों से, उतर गए।
न धोखा था कोई, न थी बेवफ़ाई,
बिना कुछ कहे हम, बिखर से गए।



34. तुमने अलविदा कहा, मैंने मान लिया

भूमिका: ज़िंदगी में एक वक़्त ऐसा आता है जब हम लड़ना छोड़ देते हैं। जब कोई हमें छोड़कर जाना चाहता है, तो हम न उसके पैर पकड़ते हैं, न मिन्नतें करते, और न ही कोई सवाल पूछते हैं। हम बस चुपचाप उसका अलविदा मान लेते हैं। लेकिन इस अलविदा को मान लेने का मतलब यह नहीं होता कि हम उन्हें भूल गए हैं या हम आगे बढ़ चुके हैं। यह उनके फैसले की इज़्ज़त करना है। यह नज़्म उसी खामोश मंज़ूरी के नाम है, जहाँ हम हार नहीं मानते, बस जाने वाले को उसकी आज़ादी दे देते हैं।

तुमने जब दूर जाने की, ठान ही ली,
मैंने खामोश रहकर, तुम्हारी बात मान ही ली।
न रोका तुम्हें, न कोई सवाल किया,
जुदाई की हकीकत, मैंने पहचान ही ली।

तुमने अलविदा कहा, मैंने सुन लिया,
नया रास्ता तुमने, जो चुन लिया।
मेरी आँखों में अश्क, आए तो थे,
मगर मैंने इस दर्द को, भी सह लिया।

तेरी मर्ज़ी थी जाना, तो जाने दिया,
बिना लड़े तुझे मैंने, गँवाने दिया।
मेरे दिल पे जो गुज़री, वो मैं ही जानूँ,
तेरी राहों में खुद को, न आने दिया।

ये मान लेने को तुम, रिहाई न कहना,
इसे इश्क़ की तुम, जुदाई न कहना।
भले ही तुम्हारा अलविदा मैंने, कबूल कर लिया,
मेरे प्यार को तुम, बेवफ़ाई न कहना।

मुझे तेरा यूँ जाना, गवारा न था,
मगर इस रिश्ते का कोई, किनारा न था।
तुमने अलविदा कहा, मैंने मान लिया,
क्योंकि तुम पे अब कोई, हक़ हमारा न था।



35. तुम्हारी चैट अभी भी है

भूमिका: आज के डिजिटल दौर में किसी को भूलना और भी मुश्किल हो गया है। एक वक़्त था जब तस्वीरें फाड़ दी जाती थीं और खत जला दिए जाते थे, लेकिन आज फोन में मौजूद एक छोटी सी चैट हमें आगे बढ़ने नहीं देती। हम बार-बार उन पुराने मैसेजेस को पढ़ते हैं, उस इंसान को ऑनलाइन देखते हैं, और खामोश रह जाते हैं। यह नज़्म उसी आधुनिक मजबूरी (modern helplessness) के नाम है, जहाँ इंसान तो चला गया है, मगर उसकी चैट आज भी हमारी उंगलियों के नीचे ज़िंदा है।

तुम्हारी वो बातें, अभी मेरे पास हैं,
इन अल्फ़ाज़ों में, तेरा ही अहसास है।
तुम्हें गए हुए तो, ज़माना हुआ है,
मगर चैट में ज़िंदा, अभी भी वो आस है।

तुम्हें ऑनलाइन जब भी, मैं पाता हूँ अब,
तो कुछ टाइप करके, मिटाता हूँ अब।
मेरा कोई हक़ तो, नहीं है तुम पर,
यही बात खुद को, बताता हूँ अब।

तुम्हारे वो मैसेज, मेरा खज़ाना हैं,
इन्हें पढ़ते-पढ़ते, जो गुज़रा ज़माना है।
मैं कैसे डिलीट कर दूँ, तेरी वो बातें,
तुझे याद करने का, बस यही एक बहाना है।

कोई नया मैसेज, अब आता नहीं है,
ये सन्नाटा दिल को, सुहाता नहीं है।
हटा दूँ मैं फोन से, तेरी ये चैट,
मगर दिल मेरा, मानता नहीं है।

मुलाकात अब अपनी, होती नहीं है,
ये आँखें भी अब, रात भर रोती नहीं हैं।
तुम्हारी वो चैट, मैंने सँभाली है अब तक,
ये यादें कभी चैन से, सोती नहीं हैं।



36. नंबर मिटाया, याद नहीं

भूमिका: आज के वक़्त में जब हम किसी को भूलना चाहते हैं, तो सबसे पहला कदम होता है उनका नंबर डिलीट करना। हमें लगता है कि फोन की स्क्रीन से नाम मिटा देने से वो इंसान हमारे दिल से भी मिट जाएगा। लेकिन त्रासदी (tragedy) यह है कि जो नंबर उंगलियों और ज़ेहन (mind) को ज़बानी याद हो, उसे कॉन्टैक्ट लिस्ट से डिलीट कर देने से कोई फर्क नहीं पड़ता। यह नज़्म उस झूठी तसल्ली के नाम है, जहाँ नंबर मिटाने के बाद भी, इंसान हमारी यादों में पहले की तरह ही महफूज़ रहता है।

तेरा नाम स्क्रीन से, हटाया है मैंने,
ये खुद को ही कैसा, छलाया है मैंने।
भले डिलीट कर दी, वो सारी निशानी,
तेरा नंबर दिल में, बचाया है मैंने।

वो दस अंक मुझको, ज़बानी रटे हैं,
मेरे ज़हन से वो, कहाँ ही हटे हैं।
मैं फोन से नंबर, हटा भी दूँ लेकिन,
तुम्हारे ही किस्से, खयालों में डटे हैं।

मैं कीपैड पे नंबर, सजाता हूँ अक्सर,
मैं खुद से ही उसको, मिलाता हूँ अक्सर।
मगर कॉल करने का, हक़ अब नहीं है,
तो बैकस्पेस से उसको, मिटाता हूँ अक्सर।

फकत एक नंबर, मिटाने से क्या है,
ये झूठी तसल्ली, जताने से क्या है।
कि तू तो मेरे, ज़हन में बस चुका है,
तेरा नाम स्क्रीन से, हटाने से क्या है।

न फोन में तेरा, कोई अक्स बचा है,
मगर दिल में तेरा, ही चेहरा सजा है।
तेरा नंबर मिटाना, था बस एक दिखावा,
तुझे याद रखना ही, मेरी सज़ा है।



37. हम बात नहीं करते, मगर सोचते हैं

भूमिका: ज़िंदगी का एक मुकाम ऐसा आता है जहाँ दो लोग एक-दूसरे से बात करना पूरी तरह बंद कर देते हैं। कोई लड़ाई नहीं होती, कोई नफरत नहीं होती, बस एक खामोशी छा जाती है। लेकिन बात न करने का मतलब यह नहीं होता कि वो एक-दूसरे को भूल गए हैं। दोनों अपनी-अपनी ज़िंदगी में आगे बढ़ जाते हैं, मुस्कुराते हैं, लेकिन दिन के किसी एक हिस्से में, वो खामोशी से एक-दूसरे के बारे में ज़रूर सोचते हैं। यह नज़्म उसी अनकहे, अनसुने और खामोश रिश्ते के नाम है, जहाँ लफ़्ज़ खत्म हो गए हैं, मगर एहसास ज़िंदा है।

हम आपस में अब कोई, बात नहीं करते,
दिन में कभी भी, मुलाक़ात नहीं करते।
मगर ऐसा नहीं है कि, तुम याद नहीं आते,
हम ज़ाहिर बस अपने, जज़्बात नहीं करते।

तुम्हें सोचकर अक्सर, मुस्कुराता हूँ मैं,
तन्हाई में खुद को, समझाता हूँ मैं।
भले सामने से कोई, पैगाम नहीं जाता,
मगर ख्वाबों में तुझसे, मिल आता हूँ मैं।

मुझे मालूम है तुम भी, मुझे सोचते होगे,
मेरी ही तरह खुद को, तुम रोकते होगे।
भले दुनिया की नज़रों में, हम अजनबी ही सही,
मगर तन्हाई में मुझे, तुम खोजते होगे।

ये कैसा हमारा एक, खामोश सा रिश्ता है,
ज़िंदगी की किताब का, अटूट सा हिस्सा है।
न शिकवा है कोई, न कोई शिकायत है,
ये दूरी ही जैसे, एक हसीन किस्सा है।

लबों पे हमारे अब, सन्नाटा सा रहता है,
बिना कुछ कहे ही दिल, सब कुछ ये कहता है।
भले हमने आपस में, गुफ़्तगू छोड़ दी,
मगर यादों का दरिया, आज भी तो बहता है।



38. आख़िरी बार मिलने की इच्छा

भूमिका: जब कोई रिश्ता खत्म होता है, तो सबसे मुश्किल काम होता है उस इंसान को फिर कभी न देखने की कसम खाना। दिमाग जानता है कि दोबारा मिलना सिर्फ पुराने ज़ख्मों को हरा करेगा, लेकिन दिल बार-बार एक 'आख़िरी मुलाक़ात' की ज़िद करता है। यह मुलाक़ात कुछ पाने के लिए नहीं, बल्कि महज़ उस चेहरे को एक बार और जी भर के देखने के लिए होती है। यह नज़्म उसी नादानी, उसी कशमकश (dilemma) और एक आख़िरी बार मिलने की उस तड़प के नाम है, जो हर परिपक्व इंसान ने कभी न कभी महसूस की होती है।

एक आख़िरी बार तुझे, देखने की हसरत है,
दिल में अभी भी मेरी, वही पुरानी शिद्दत है।
जानता हूँ मिलना अब, मुनासिब नहीं अपना,
मगर इन निगाहों को, बस तेरी ज़रूरत है।

जी चाहता है एक दफ़ा, सामने तेरे आ जाऊँ,
खामोश रहकर तुझे मैं, दिल का हाल बताऊँ।
डर है कि मेरा सब्र, कहीं टूट न जाए,
फिर भी ये दिल करे, कि तुझसे मिल आऊँ।

कहने को बाकी अब, कोई भी बात नहीं,
हाथों में मेरे अब, तेरा वो हाथ नहीं।
बस एक सुकून चाहिए, रूह को मेरी,
माना कि किस्मत में, अब तेरा साथ नहीं।

ये आख़िरी मुलाक़ात, एक मीठा सा ज़हर है,
इन ठहरे हुए जज़्बातों की, उठती लहर है।
मिलने से मेरे ज़ख्म, फिर से हरे होंगे,
ये खुद पे ही खुद का, ढहाया कहर है।

बस दूर से देखने की, इजाज़त ही दे दे,
इस तड़पते हुए दिल को, थोड़ी राहत ही दे दे।
मैं पलट कर फिर कभी, नहीं आऊँगा वापस,
मुझे आख़िरी बार मिलने की, मोहलत ही दे दे।



39. तुम्हारी कमी का कोई नाम नहीं

भूमिका: जब कोई इंसान हमारी ज़िंदगी से जाता है, तो हम अक्सर यह बता सकते हैं कि हमें उनकी कौन सी बात याद आ रही है—उनकी हँसी, उनकी बातें या उनका साथ। लेकिन एक वक़्त ऐसा आता है जब वो सब यादें धुंधली हो जाती हैं और बस एक अजीब सा खालीपन रह जाता है। इस खालीपन का कोई नाम नहीं होता। हम किसी को समझा नहीं सकते कि हमें क्या महसूस हो रहा है, बस इतना पता होता है कि कुछ तो है जो हमेशा के लिए खो गया है। यह नज़्म उसी बेनाम कमी (nameless void) के नाम है।

तुम्हारी कमी का कोई, नाम नहीं,
इस सूनेपन का कोई, अंजाम नहीं।
मैं कैसे समझाऊँ कि, क्या चुभता है मुझे,
हर दर्द का दुनिया में, मुकाम नहीं।

कमी किस चीज़ की है, बता नहीं सकता,
मैं अपना ये दर्द, दिखा नहीं सकता।
एक खालीपन सा है, जो हर दम साथ है,
मैं चाह कर भी इसे, मिटा नहीं सकता।

न कोई ज़ख्म है, न कोई निशान है,
फिर भी ये दिल मेरा, बस परेशान है।
तुम्हारे बिना ज़िंदगी, चल तो रही है,
मगर ये सफर अब, बड़ा ही वीरान है।

मैं लोगों की भीड़ में, तन्हा सा रहता हूँ,
ये बिन नाम की कमी, खामोशी से सहता हूँ।
कोई पूछता है जब भी, उदासी की वजह,
तो मुस्कुरा के बस, "कुछ नहीं" कहता हूँ।

तुम्हारे जाने का कोई, मलाल नहीं है,
ज़हन में मेरे अब कोई, सवाल नहीं है।
बस एक खाली जगह है, जो भरती नहीं कभी,
तुम्हारी कमी की कोई, मिसाल नहीं है।



40. कुछ लोग जाते नहीं

भूमिका: जुदाई का दस्तूर यह है कि लोग छोड़कर चले जाते हैं। उनके कदम हमारी दहलीज़ से पार हो जाते हैं, उनका नंबर फोन से मिट जाता है, और उनकी आवाज़ खामोशी में बदल जाती है। लेकिन कुछ लोग, भले ही दुनिया के लिए जा चुके हों, हमारे ज़हन (mind) से कभी नहीं जाते। वो हमारे ख्यालों में, हमारे फैसलों में, और हमारी आदतों में ज़िंदा रहते हैं। यह नज़्म उन लोगों के नाम है जो दूर जाकर भी, कभी पूरी तरह से हमें छोड़कर नहीं जाते।

कहने को वो मेरी, ज़िंदगी से चले गए,
आँखों की इस, नमी से चले गए।
मगर सच तो ये है कि, वो गए ही नहीं,
बस मेरी दुनिया की, ज़मीं से चले गए।

वो मेरे ख्यालों में, आज भी ठहरते हैं,
मेरी तन्हाइयों से वो, रोज़ ही गुज़रते हैं।
मैं भूल चुका हूँ उन्हें, ज़माने की नज़र में,
मगर वो मेरे रगों में, आज भी उतरते हैं।

मेरी खामोशी पे उनका, असर आज भी है,
उन यादों की तरफ मेरा, सफ़र आज भी है।
भले वो अब मेरे, मुकद्दर में नहीं हैं,
मेरे ज़हन में उनका, बसर आज भी है।

जो आदतें उन्होंने, कभी मुझे दी थीं,
जो बातें उन्होंने, कभी मुझसे की थीं।
वो मेरी हर एक साँस में, अब भी ज़िंदा हैं,
वो यादें जो मैंने, उनके साथ जी थीं।

कुछ लोग कभी पूरी, तरह जाते नहीं,
भले वो अब सामने, नज़र आते नहीं।
जिस्म दूर हो जाते हैं, रास्ते बदल जाते हैं,
मगर ज़हन से वो कभी, मिट पाते नहीं।



V. तन्हाई - भीड़ में अकेला इंसान

41. भीड़ में अकेलापन

भूमिका: अकेले होने (Being alone) और अकेलापन महसूस करने (Loneliness) में बहुत बड़ा फर्क है। जब हम किसी कमरे में अकेले होते हैं, तो वह महज़ एक शारीरिक स्थिति होती है। लेकिन सबसे भयानक तन्हाई वह होती है, जब आपके आस-पास सैकड़ों लोग हों, दोस्त हों, महफ़िलें सजी हों, और फिर भी आपको लगे कि आपको समझने वाला कोई नहीं है। यह नज़्म उसी मनोवैज्ञानिक खालीपन (psychological void) के नाम है, जहाँ भीड़ का शोर इंसान के अंदर के सन्नाटे को नहीं तोड़ पाता।

महफ़िल में हर कोई, मेरा जाना-पहचाना है,
हर चेहरे पे एक नया, सा ही फ़साना है।
मैं लोगों की भीड़ में, बैठा तो हूँ मगर,
मेरे अंदर का हर कोना, एक वीराना है।

हर एक शख्स यहाँ, जैसे मुझे जानता है,
मेरी झूठी हँसी को, सच ही वो मानता है।
मैं भीड़ का हिस्सा हूँ, बस एक दिखावे के लिए,
मेरे अंदर की तन्हाई, कोई कहाँ पहचानता है।

कंधों से कंधे यहाँ, लोगों के टकराते हैं,
चेहरों पे नक़ाब ओढ़े, सब पास से जाते हैं।
मेरी खामोश चीखें, किसी को सुनाई नहीं देतीं,
बस रस्मों की खातिर यहाँ, रिश्ते निभाते हैं।

अकेले कमरे का सन्नाटा, तो फिर भी खलता नहीं,
मगर इस भीड़ में कोई, साथ मेरे चलता नहीं।
हज़ार चेहरे हैं मेरे, आस-पास यहाँ फिर भी,
ये कैसा सूनापन है जो, ज़हन से टलता नहीं।

इस भीड़ में रहकर भी, अजनबी सा होता हूँ,
मुस्कुराहटों की आड़ में, अपना दर्द संजोता हूँ।
कोई पढ़ ना ले मेरी, आँखों की इस उदासी को,
भरी हुई इस महफ़िल में, खुद को ही खोता हूँ।



42. रात के दो बजे

भूमिका: दुनिया का सबसे सच्चा और बेनकाब वक़्त रात के दो बजे का होता है। दिन के उजाले में हम काम, भीड़ और ज़िम्मेदारियों में खुद को उलझा कर अपने असली जज़्बातों से भाग सकते हैं। लेकिन रात के इस पहर में कोई शोर नहीं होता, कोई काम नहीं होता। जब पूरी दुनिया सो रही होती है, तब इंसान अपने अतीत, अपनी गलतियों और अपनी उस तन्हाई के साथ बिल्कुल अकेला रह जाता है, जिससे वह दिन भर छुपता रहा था। यह नज़्म रात के उसी खामोश और भारी पहर के नाम है।

रात के दो बजे का, ये ठहरा हुआ सन्नाटा है,
अतीत का हर एक पन्ना, ज़हन को सताता है।
सो चुकी है ये दुनिया, ओढ़ के अपनी चादर,
मगर ये मेरे अंदर का शोर, मुझे जगाता है।

दिन के उजालों में, दब जाते हैं जो सवाल,
इस रात की स्याही में, उभरता है वो मलाल।
कोई गवाह नहीं है, मेरे इस टूटने का,
ज़हन में गूंजता है, बस गुज़रे वक़्त का खयाल।

दिन भर की थकान का, मैं करता हूँ जब हिसाब,
उतार कर रख देता हूँ, हर एक झूठा नक़ाब।
नींद मेरी आँखों से, बहुत दूर जा चुकी है,
ये रात मुझसे माँगती है, मेरी ज़िंदगी के जवाब।

रात के इस पहर में, वक़्त जैसे ठहर सा गया,
खामोशियों का जैसे, एक दरिया गुज़र सा गया।
मैं खुद से ही लड़ता हूँ, खुद ही से हारता हूँ,
हर एक पुराना ज़ख्म, फिर से उभर सा गया।

ये रात के दो बजे भी, एक अजीब सी हक़ीक़त हैं,
ज़िंदगी से मेरी ये, खामोश सी शिकायत हैं।
सुबह होते ही फिर से, पहन लूँगा मैं मुस्कुराहट,
अकेलेपन की ये रातें, मेरी खामोश ज़रूरत हैं।



43. किसी को बताना नहीं आता

भूमिका:हर दर्द ऐसा नहीं होता जिसे लफ़्ज़ों में बयान किया जा सके। कई बार इंसान अंदर से टूट रहा होता है, एक गहरी घुटन महसूस कर रहा होता है, लेकिन जब कोई पूछता है कि "क्या हुआ?", तो उसके पास कोई जवाब नहीं होता। उसे खुद नहीं पता होता कि वह किस बात से परेशान है, या अगर पता भी हो, तो उसे लगता है कि कोई दूसरा उसकी इस उलझन को समझ नहीं पाएगा। थक-हार कर वह सिर्फ मुस्कुरा देता है और कह देता है, "कुछ नहीं।" यह नज़्म उसी बेबसी और उस दर्द के नाम है, जिसे बताना तो है, लेकिन बताना नहीं आता।

मुझे अपने ही ज़ख्मों को, अब जताना नहीं आता,
इस खामोश तड़प को, लफ़्ज़ों में लाना नहीं आता।
मैं लोगों से हँसकर, रोज़ मिलता तो हूँ मगर,
मुझे अपना ये सच्चा दर्द, किसी को बताना नहीं आता।

मैं अपने दर्द का किस्सा, भला कैसे सुनाऊँ,
जो ज़ख्म दिखते ही नहीं, वो किसे मैं दिखाऊँ।
दुनिया की नज़रों में तो, मैं एक आबाद शख्स हूँ,
अंदर की ये उलझन, अब मैं किस किस से छुपाऊँ।

ज़हन में मेरे हर पल, कशमकश सी रहती है,
मेरी इन खामोशियों में, तपिश सी रहती है।
मैं अपना ये दर्द किसी से, कह नहीं पाता,
बस सीने में एक गहरी, खलिश सी रहती है।

मुझे अब हर एक दर्द को, खामोशी से है सहना,
मुझे अब किसी से भी, कुछ भी नहीं है कहना।
मेरे अंदर के शोर से, वाकिफ़ नहीं है कोई,
मुझे अपनी ही दुनिया में, तन्हा सा है रहना।

मेरे दिल की हकीकत से, हर कोई अनजान है,
लफ़्ज़ों में इसे ढालना, न मेरे लिए आसान है।
मैं अंदर से किस कदर, बिखर चुका हूँ आज,
मेरी इस खामोशी में ही, दर्द का बयान है।



44. मुस्कुराता हुआ आदमी

भूमिका: समाज में एक अजीब सा नियम है—जो इंसान सबसे ज़्यादा ज़ोर से हँसता है, अक्सर वह अंदर से सबसे ज़्यादा टूटा हुआ होता है। एक मुस्कुराता हुआ चेहरा सबसे बड़ा नक़ाब (mask) होता है, क्योंकि कोई भी एक हँसते हुए इंसान से यह नहीं पूछता कि "तुम उदास क्यों हो?" यह नज़्म उन तमाम लोगों के नाम है, जिन्हें दुनिया एक बहुत खुशमिज़ाज और ज़िंदादिल इंसान मानती है, लेकिन तन्हाई में जिनके पास अपने ही आंसुओं को पोंछने वाला कोई नहीं होता।

ज़माने की नज़रों में, बहुत खुशमिज़ाज हूँ,
हर एक महफ़िल का मैं, हसीन सा राज़ हूँ।
किसी ने मेरे अंदर की, उदासी नहीं देखी,
मैं अपने ही दर्द की, अनकही आवाज़ हूँ।

लबों पे हमेशा मैं, हँसी को सजाता हूँ,
अंदर की चीखों को, रोज़ मैं दबाता हूँ।
कोई पूछ बैठे अगर, हाल मेरे दिल का,
तो झूठी कहानी कोई, हँस के सुनाता हूँ।

मेरे ठहाकों में छिपी, घुटन नहीं दिखती,
चेहरे के पीछे की, थकन नहीं दिखती।
सबको लगता है कि, आबाद है दुनिया मेरी,
मगर मेरे सीने की, चुभन नहीं दिखती।

मैं दर्द के साये से, दूर ही रहता हूँ,
हर एक ज़ख्म को मैं, हँस कर ही सहता हूँ।
कोई जान ना ले मेरे, अंदर की ये टूटन,
मैं खुद को मुकम्मल, और आबाद कहता हूँ।

ये हँसता हुआ चेहरा, एक दिखावा ही तो है,
खुद से ही खुद का, ये छलावा ही तो है।
मैं लोगों की भीड़ में, तन्हा ही खड़ा हूँ,
ये मुस्कुराहट मेरी, एक पहनावा ही तो है।



45. ऑनलाइन सब, पास कोई नहीं

भूमिका: पहले के दौर में जब इंसान अकेला होता था, तो वाकई उसके आस-पास कोई नहीं होता था। मगर आज की तन्हाई बहुत अलग है। हमारे फोन में हज़ारों कॉन्टैक्ट्स हैं, सोशल मीडिया पर सैकड़ों दोस्त हैं। हम फोन की स्क्रीन खोलते हैं और देखते हैं कि हर कोई 'ऑनलाइन' है। सब जगे हुए हैं। लेकिन जब रात को दिल भारी होता है और हमें किसी से बात करने की ज़रूरत होती है, तो उन सैकड़ों नामों में से कोई एक नाम ऐसा नहीं मिलता जिसे हम बेझिझक अपना दर्द बता सकें। यह नज़्म उसी आधुनिक और डिजिटल तन्हाई (digital loneliness) के नाम है।

फोन की स्क्रीन पे, हज़ारों नाम सजे हैं,
सब अपनी ही दुनिया में, जाने कहाँ रमे हैं।
मुझे आज दरकार थी, बस एक सच्चे दोस्त की,
मगर मेरे अश्क तो, आँखों में ही थमे हैं।

यहाँ हर किसी से मेरा, कोई राब्ता तो है,
दिखावे का ही सही, कोई वास्ता तो है।
मगर दिल की बात कहने को, कोई नहीं मिलता,
इस भीड़ और मेरे बीच, एक फासला तो है।

मैं कॉन्टैक्ट की लिस्ट को, रोज़ ही टटोलता हूँ,
बंद कमरों में खुद से, झूठ अक्सर बोलता हूँ।
कि कोई तो होगा जो, मेरी खामोशी पढ़ेगा,
इसी एक उम्मीद में, चैट फिर से खोलता हूँ।

डिजिटल दुनिया का भी, ये कैसा बुना हुआ जाल है,
किसी को फ़ुर्सत नहीं कि पूछे, मेरा क्या हाल है।
हरे रंग के निशान से, सब ऑनलाइन तो दिखते हैं,
फिर भी मैं तन्हा हूँ, ये दौर बड़ा अजीब है।

स्क्रीन की रोशनी में, झूठे अक्स झलकते हैं,
तन्हाई के खौफ से, लोग अंदर सुलगते हैं।
सब ऑनलाइन हैं, मगर पास कोई नहीं है अब,
हम इस डिजिटल भीड़ में, बस यूँ ही भटकते हैं।



46. ख़ुद से बातचीत

भूमिका: दुनिया में अक्सर खुद से बातें करने वालों को पागल समझ लिया जाता है। मगर हकीकत में, खुद से गुफ़्तगू (conversation) करना किसी इंसान की सबसे बड़ी मजबूरी और सबसे गहरी तसल्ली होती है। जब आस-पास कोई ऐसा नहीं होता जो आपके दर्द को बिना जज किए सुन सके, तो इंसान अपने ही अक्स (reflection) को अपना हमराज़ बना लेता है। इस बातचीत में कोई झूठ नहीं होता, कोई नक़ाब नहीं होता। यह नज़्म उसी तन्हाई के नाम है, जहाँ एक इंसान खुद ही अपना वक्ता है और खुद ही अपना श्रोता।

तन्हाई में खुद की आवाज़, मैं सुनता हूँ अक्सर,
सन्नाटों से अपने धागे, मैं बुनता हूँ अक्सर।
मेरी उलझन को समझने वाला, कोई नहीं है यहाँ,
तो खुद को ही अपना हमराज़, मैं चुनता हूँ अक्सर।

आईने के सामने अब, कोई भी नक़ाब नहीं होता,
खुद से किए गए सवालों का, हिसाब नहीं होता।
मैं अपनी हर एक हार को, बेझिझक मान लेता हूँ,
क्योंकि खुद से गुफ़्तगू में, झूठा जवाब नहीं होता।

अपनी ही तसल्ली के, नए बहाने ढूँढता हूँ,
इस खामोश से सफर में, मैं ठिकाने ढूँढता हूँ।
जो बात मैं दुनिया से, कभी कह नहीं पाता,
वो दर्द सुनाने को, अपने अंदर ज़माने ढूँढता हूँ।

इसे पागलपन कह लो, या मेरी मजबूरी समझ लो,
दुनिया के इन झूठे रिश्तों की, इसे दूरी समझ लो।
कोई अपना होता तो मैं भी, उसे हाल-ए-दिल सुनाता,
इस अकेलेपन को ही मेरी, कहानी पूरी समझ लो।

खुद ही से रूठना और, खुद ही को मनाना है,
मेरी इस तन्हाई का अब, यही एक फसाना है।
जब कोई साथ नहीं चला, तो खुद का हाथ थाम लिया,
मुझे अब अपनी ही रूह के साथ, उम्र बिताना है।



47. अकेले खाने की आदत

भूमिका: अकेले रहना फिर भी आसान है, लेकिन अकेले खाना एक बहुत भारी अहसास होता है। जब खाने की टेबल (dining table) पर दो की जगह सिर्फ एक थाली सजती है, तो खाने का स्वाद भूख मिटाने से ज़्यादा एक रस्म निभाने जैसा हो जाता है। कोई यह पूछने वाला नहीं होता कि दिन कैसा बीता या खाने में नमक कैसा है। एक वक़्त था जब खाने की मेज़ पर घर की रौनक होती थी, और अब वहाँ सिर्फ फोन की स्क्रीन और सन्नाटा होता है। यह नज़्म उसी खामोश मेज़ और अकेले खाने की उस भारी आदत के नाम है।

अकेले बैठकर हर एक, निवाला तोड़ता हूँ मैं,
इस सन्नाटे से अपना, रिश्ता जोड़ता हूँ मैं।
कभी अपनों की बातों से, ये दस्तरख्वान सजता था,
अब खामोशी की चादर को, अक्सर ओढ़ता हूँ मैं।

एक इंसान का खाना, रोज़ जब पकाता हूँ,
बिना किसी स्वाद के बस, यूँ ही चबाता हूँ।
कभी बातों ही बातों में, गुज़र जाता था ये वक़्त,
अब मोबाइल की स्क्रीन देख, वक़्त बिताता हूँ।

खाली पड़ी वो कुर्सी भी, अब उदास रहती है,
मेरी तन्हाई को वो भी, खामोशी से सहती है।
न कोई ज़िक्र होता है, न कोई फिक्र होती है,
बस सन्नाटे की एक नदी, इस कमरे में बहती है।

भूख भी अब मेरी, जैसे मोहताज नहीं है,
इस अकेलेपन का कोई भी, इलाज नहीं है।
पेट भर जाता है मेरा, मगर रूह भूखी है,
मेरी इस तन्हा मेज़ पे, अब कोई साज़ नहीं है।

अकेले खाने की आदत, अब तो पड़ चुकी है,
वक़्त की ये सुई जैसे, यहीं पर अड़ चुकी है।
निवालों के साथ अक्सर, अपना दर्द निगलता हूँ,
ज़िंदगी की रौनक जैसे, अब उजड़ चुकी है।



48. कमरे की ख़ामोशी

भूमिका: जब घर में मेहमान आते हैं, दोस्त इकट्ठा होते हैं या कोई अपना हमारे साथ होता है, तो कमरे की दीवारें भी जैसे साँस लेने लगती हैं। ठहाके, बातें और कदमों की आहट से पूरे कमरे में एक जान सी आ जाती है। लेकिन असली तन्हाई का अहसास तब होता है जब सब लोग दरवाज़े से बाहर चले जाते हैं। अचानक वह कमरा जो कुछ पल पहले ज़िंदा था, एक गहरे सन्नाटे में डूब जाता है। यह नज़्म उस भारी और अजीब सी खामोशी के नाम है, जो महफ़िल के उठ जाने के बाद पूरे कमरे में छा जाती है।

महफ़िल के उठते ही कमरे में, खामोशी सी ठहरती है,
इन दीवारों के सीने में, उदासी सी उतरती है।
अभी कुछ देर पहले यहाँ, अपनों का जो मेला था,
अब इस सूनेपन में मेरी, हर एक रात गुज़रती है।

बिखरे हुए सामानों में, उनके अभी निशान हैं,
ये सिर्फ ईंट-पत्थरों का, अब एक खाली मकान है।
अभी तो साँस ले रहा था, ये कमरा बातों से उनकी,
उनके जाते ही जैसे, हर कोना वीरान है।

इन दीवारों पे जाने कैसी, एक वीरानी छाई है,
हर कोने में बैठी मेरी, खामोश सी परछाई है।
अभी तो गूंज रहे थे यहाँ, कहकहे मेरे अपनों के,
सबके जाते ही हिस्से मेरे, बस ये तन्हाई आई है।

हर एक कोने में बिखरे, अनकहे से सवाल हैं,
इन पर्दों की सिलवटों में भी, छुपा हुआ मलाल है।
घड़ी की टिक-टिक के सिवा, कुछ भी नहीं है अब यहाँ,
मेरे और इस कमरे का, अब एक जैसा हाल है।

कमरे की इस खामोशी का, अपना एक अंदाज़ है,
इन दीवारों के सीने में भी, दफ्न कई राज़ हैं।
जब महफ़िलें उठ जाती हैं, और लोग चले जाते हैं,
तब ये सन्नाटा ही मेरी, तन्हाई की आवाज़ है।



49. कुछ दर्द निजी होते हैं

भूमिका: दुनिया हमेशा कहती है कि अपना दर्द बाँट लेना चाहिए, इससे दिल हल्का होता है। लेकिन एक परिपक्व (mature) इंसान जानता है कि हर दर्द बाँटने के लिए नहीं होता। कुछ ज़ख्म इतने गहरे, इतने निजी होते हैं कि अगर उन्हें दुनिया के सामने रख दिया जाए, तो लोग या तो उनका तमाशा बना देते हैं या फिर झूठी हमदर्दी दिखाते हैं। कुछ दर्द हमारी अपनी 'जागीर' (private possession) होते हैं, जिन्हें हम किसी महफ़िल में नहीं नीलाम कर सकते। यह नज़्म उसी खामोश गरिमा (dignity) के नाम है, जहाँ इंसान अपने सबसे बड़े दर्द को दुनिया की नज़रों से बचाकर रखता है।

हर दर्द का महफ़िल में, तमाशा नहीं करते,
हम अपने ही ज़ख्मों को, यूँ रुसवा नहीं करते।
कुछ दर्द बहुत खास हैं, मेरी रूह के अंदर,
हम हर किसी शख्स से, ये साझा नहीं करते।

बाज़ार में ज़ख्मों की, नुमाइश नहीं करते,
हम दर्द पे रोने की, गुज़ारिश नहीं करते।
ये दर्द ही अब तो मेरे, सच्चे से साथी हैं,
हम झूठे दिलासों की, फरमाइश नहीं करते।

हर चीख को होठों से, निकलने नहीं देता,
मैं दर्द के इस मोम को, पिघलने नहीं देता।
कुछ दर्द हैं मेरे ज़ाती, परअनमोल सा हिस्सा हैं,
मैं इनको किसी और में, ढलने नहीं देता।

दुनिया की हमदर्दी में, मिलावट सी लगती है,
हर लफ़्ज़ में झूठी सी, सजावट सी लगती है।
मैं इसलिए खामोश हूँ, अपने ही ज़ख्मों पर,
अब मुझे इन दिलासों से, थकावट सी लगती है।

कुछ दर्द बहुत निजी हैं, इन आँखों की नमी में,
मैं ढूँढता हूँ सुकून, अपनी ही इस कमी में।
ये दर्द मुझे खुद से, मिलाते हैं अक्सर,
मैं आबाद हूँ अपने ही, अश्कों की ज़मीं में।



50. हम अपनी ही नज़रों से छुपते रहे

भूमिका: दुनिया से झूठ बोलना फिर भी आसान है, लेकिन एक वक़्त ऐसा आता है जब इंसान खुद से झूठ बोलने लगता है। हम आईने में देखकर भी अपनी उदासी को नहीं पहचानना चाहते। हम अपनी तड़प को थकान का नाम दे देते हैं, अपनी खामोशी को समझदारी का, और अपने टूटने को हालात का। यह नज़्म उस भयानक आत्म-छल (self-deception) के नाम है, जहाँ हम ज़माने से नहीं, बल्कि अपनी ही नज़रों से अपनी हक़ीक़त छुपाने में उम्र गुज़ार देते हैं।

हक़ीक़त से अपनी ही, आँखें चुराते रहे,
दिलासे कई झूठे, दिल को दिलाते रहे।
ज़माने की नज़रों का, कोई भी खौफ न था,
हम अपनी ही नज़रों से, खुद को छुपाते रहे।

आईने के सामने भी, एक नक़ाब ओढ़ लिया,
सच्चाई के रास्तों से, हमने मुँह मोड़ लिया।
हमें डर था कि खुद का, सामना कैसे करेंगे,
तो अपने ही अक्स से, रिश्ता ये तोड़ लिया।

तड़प को हम अपनी, महज़ एक थकान कहते रहे,
खामोशी को अपनी, हम अपना गुमान कहते रहे।
ये खुद से ही खुद का, कैसा फरेब था,
हम टूटते हुए पत्तों को, अपनी उड़ान कहते रहे।

ज़हन में अपने ही, कितने फसाने बनाते रहे,
हम खुद को ही खुद से, रोज़ मिटाते रहे।
उजालों से कोई भी, रंजिश नहीं थी हमें,
हम अपने ही हाथों से, चिरागों को बुझाते रहे।

ये कैसा भ्रम है जो, ज़हन में पाले हुए हैं,
हम अपने ही होंठों पे, लगाए ताले हुए हैं।
दुनिया को लगता है, हम बहुत आबाद हैं,
मगर हम तो अंदर से, खुद के ही निकाले हुए हैं।



VI. रिश्ते — प्रेम से बहुत आगे

51. माँ की थकान

भूमिका: बचपन से हम अपनी माँ को सिर्फ एक भूमिका में देखते हैं—वह इंसान जो हमारी हर ज़रूरत पूरी करती है, जो कभी थकती नहीं, और जो कभी बीमार नहीं पड़ती। हम अपनी ज़िंदगी बनाने में इतने मशरूफ हो जाते हैं कि हमें पता ही नहीं चलता कि कब उसके बालों में सफेदी आ गई और कब उसके हाथों की त्वचा खुरदरी हो गई। जब तक हमें उसकी थकान का अहसास होता है, तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। यह नज़्म उसी खामोश थकान और हमारी उस नासमझी के नाम है, जो अक्सर वक़्त गुज़र जाने के बाद समझ आती है।

मैंने जब भी देखा उसे, बस काम करते देखा,
मेरे उजालों के लिए, खुद को शाम करते देखा।
कभी फुर्सत के चंद पल, उसने न माँगे किसी से,
मैंने उसे बस मेरा ही, इंतज़ाम करते देखा।

वो अपने हर एक दर्द को, हँस के छुपाती रही,
मेरी हर एक ज़िद को, वो पलकों पे बिठाती रही।
मैंने कभी फुरसत से, उसकी थकान न देखी,
वो मेरी राहों के लिए, खुद को मिटाती रही।

उसके हाथों की लकीरें, अब कुछ खुरदरी सी हैं,
उसकी आवाज़ में भी अब, एक कमज़ोरी सी है।
मैं पढ़ नहीं पाया कभी, उसके माथे की सिलवटें,
उसकी सूखी आँखों में आज भी, मेरी फिक्र भरी सी है।

जब एहसास हुआ मुझे, तो वक़्त बहुत गुज़र गया,
मेरे ज़हन में एक गहरा, सन्नाटा सा ठहर गया।
मैंने देखा जब उसे, उम्र के ढलते पड़ाव पे,
मेरी गफलत का हर नशा, जैसे अब उतर गया।

अब उसकी नींदों में वो, पुरानी राहत नहीं है,
उसके कमज़ोर कदमों में, पहली सी आहट नहीं है।
हम बड़े हो गए और, वो खामोशी से ढल गई,
मगर उसकी दुआओं में, कोई भी मिलावट नहीं है।



52. पिता का प्यार

भूमिका: माँ का प्यार आँखों से छलक जाता है, लेकिन पिता का प्यार अक्सर पसीने में बहता है। वह शायद ही कभी आपको गले लगाकर कहे कि वह आपसे कितनी मोहब्बत करता है। उसकी मोहब्बत आपके स्कूल की फीस भरने में, आपकी ज़रूरतों को बिना मांगे पूरा करने में और आपके भविष्य को सँवारने में छुप जाती है। एक पिता उस खामोश तारे (guiding star) की तरह होता है, जो खुद जलकर आपकी राहें रोशन करता है। यह नज़्म उसी खामोश रहनुमा (guide) और उस प्रेम के नाम है, जिसे लफ़्ज़ों की ज़रूरत नहीं होती।

उसने लफ़्ज़ों में कभी, प्यार अपना जताया नहीं,
सीने से लगाकर मुझे, कभी उसने सुलाया नहीं।
वो मेरी ज़िंदगी का, एक खामोश सा रहनुमा था,
अपनी फिक्र को उसने, ज़माने को दिखाया नहीं।

मेरी हर एक ख्वाहिश का, वो खामोश ज़रिया था,
वो बाहर से सख्त मगर, अंदर से एक दरिया था।
मेरी ज़िंदगी के सफर को, उसने ही तो सँवारा है,
दुनिया को देखने का, वो ही मेरा नज़रिया था।

अपनी हर एक ज़रूरत को, वो अक्सर टाल देता था,
मुसीबत की हर आँधी में, वो खुद को ढाल लेता था।
पसीने से भीग कर भी, कभी उफ़ तक न की उसने,
मेरे हर एक लड़खड़ाते कदम को, सँभाल लेता था।

वो एक ऐसा सितारा था, जिसने राहें दिखाईं,
मेरी हर एक उलझन की, उसने गाँठें सुलझाईं।
भले ही बात करने में, वो अक्सर सख्त रहता था,
मगर उसकी खामोशी ने, मुझे मंज़िलें दिखाईं।

पिता का प्यार किसी, लफ़्ज़ का मोहताज नहीं,
उसकी फिक्र के जैसा, कोई भी रिवाज़ नहीं।
वो नींव की ईंट है, जिस पे घर खड़ा है मेरा,
उसके साये के बिना, मेरे सर पे कोई ताज़ नहीं।



53. घर छोड़ते बच्चे

भूमिका: बच्चे जब बड़े होते हैं, तो उनका घर से जाना ज़िंदगी का एक ज़रूरी हिस्सा बन जाता है। माँ-बाप खुद दुआ करते हैं कि उनके बच्चे कामयाब हों, नई उड़ान भरें। लेकिन जब वह दिन असल में आता है, जब बैग पैक हो रहे होते हैं और दरवाज़े पर गाड़ी इंतज़ार कर रही होती है, तो उस वक़्त एक अजीब सी खामोशी छा जाती है। जिन बच्चों के शोर से कभी पूरा घर ज़िंदा रहता था, उनके जाते ही कमरों में एक भयानक सन्नाटा पसर जाता है। यह नज़्म उस चौखट के नाम है, जहाँ माँ-बाप अपने ही हिस्से की जान को खुद से दूर जाते हुए देखते हैं।

घर के हर एक कोने में, उदासी सी छाई है,
बच्चों के जाने की घड़ी, आज करीब आई है।
जिनको हमने सिखाया था, इन हवाओं में उड़ना,
आज उनकी उड़ान ने, नई मंज़िल पाई है।

बंद करके सूटकेस में, वो अपना जहाँ ले जाते हैं,
हम आँखों की नमी को, ज़बरदस्ती छुपाते हैं।
वो जा रहे हैं आज अपनी, नई दुनिया बसाने को,
और हम देहलीज़ से उन्हें, बस देखते रह जाते हैं।

उनके बिना ये घर भी अब, काटने को आता है,
हर एक खाली कमरे में, उनका अक्स नज़र आता है।
हम जानते हैं कि उन्हें, आगे बढ़ना ही होगा,
मगर ये अचानक का सन्नाटा, बहुत सताता है।

कदम जब वो चौखट से, बाहर निकालते हैं,
हम अपने काँपते हाथों से, खुद को सँभालते हैं।
ये रस्म-ए-ज़िंदगी है, जिसे निभाना ही पड़ता है,
हम अपने सूने आँगन में, अब खामोशी पालते हैं।

औलाद का जाना भी, कैसा अजीब दस्तूर है,
हमारे ही दिल के टुकड़े, अब हमसे ही दूर हैं।
हमने ही दी थी दुआ, उनके कामयाब होने की,
और अब अपनी ही दुआ के आगे, हम मजबूर हैं।



54. माँ-बाप बूढ़े होते देखना

भूमिका: बचपन में हमें लगता है कि हमारे माँ-बाप कभी बूढ़े नहीं होंगे। वो हमारे लिए सुपरहीरो होते हैं, जो कभी नहीं थकते, कभी बीमार नहीं पड़ते और हर मुश्किल का हल निकाल लेते हैं। लेकिन ज़िंदगी का सबसे खौफनाक और भावुक पल वह होता है, जब आप पहली बार उनके हाथों को काँपते हुए देखते हैं, उनके कदमों को धीमा होते देखते हैं। वह वक़्त जब भूमिकाएँ (roles) बदल जाती हैं—जो हमेशा आपकी रक्षा करते थे, अब उन्हें आपकी रक्षा की ज़रूरत होती है। यह नज़्म उसी बेबसी और उस भारी अहसास के नाम है।

कल तक जो हर मुश्किल से, लड़ जाते थे मेरे लिए,
ज़माने की हर आँधी पे, अड़ जाते थे मेरे लिए।
आज उनके ही हाथों को, काँपते हुए देखा है,
वो खुद जो दुनिया से, भिड़ जाते थे मेरे लिए।

अब उनकी वो तेज़ नज़रें, धुंधली सी हो गई हैं,
चेहरे की वो पुरानी चमक, गुम सी हो गई है।
दवाइयों के पर्चों में, उलझी है अब उनकी शाम,
आवाज़ की वो कड़क भी, अब धीमी सी हो गई है।

उन्हें अब छोटे-छोटे कामों में, थकते हुए देखा है,
उम्र की इस ढलान पे अक्सर, रुकते हुए देखा है।
जो बरगद कभी मुझको, कड़ी धूप से बचाता था,
आज उस पेड़ की शाखों को, झुकते हुए देखा है।

भूलने लगे हैं वो अब, छोटी-छोटी सी बातें,
अक्सर ही जागकर वो, गुज़ार देते हैं रातें।
मैं डर जाता हूँ देखकर, उनकी ये कमज़ोरी,
वक़्त ले रहा है वापस, ज़िंदगी की सौगातें।

ये मंज़र ज़िंदगी का, मुझे अंदर से रुलाता है,
उन्हें बूढ़ा होता देखकर, दिल बैठ सा जाता है।
हम बड़े तो हो गए हैं, पर इतने भी बड़े नहीं,
उनका ये ढलता हुआ साया, बहुत सताता है।



55. भाई-बहन की लड़ाइयाँ

भूमिका: भाई-बहन का प्यार दुनिया का सबसे अजीब प्यार है। ये इकलौता ऐसा रिश्ता है जहाँ हम लफ़्ज़ों में प्यार नहीं जताते, बल्कि लड़-झगड़ कर, और एक-दूसरे की शिकायतें करके अपना हक़ जताते हैं। हमें लगता था कि हम लड़ रहे हैं, लेकिन असल में वो एक-दूसरे का ध्यान खींचने का हमारा अपना तरीका था। यह नज़्म उसी अजीब सी मोहब्बत के नाम है जहाँ झगड़ों के पीछे बेहिसाब फिक्र छुपी होती है।

ज़रा सी बात पे घर को, जो सर पे उठाते थे,
एक-दूजे को रुलाने के, बहाने ढूँढ लाते थे।
हमारी उन लड़ाइयों में, कोई नफरत नहीं थी,
हम झगड़ों के बहाने ही, अपना हक़ जताते थे।

वैसे तो बात-बात पे, हम आपस में झगड़ते थे,
एक-दूजे की ज़िद पे, हम रोज़ ही अकड़ते थे।
मगर बाहर का कोई, आँख भी दिखा दे तो,
हम एक-दूजे की खातिर, ज़माने से भिड़ते थे।

मेरे हर एक ज़ख्म पे, दर्द उसे भी होता था,
मेरी फिक्र में वो अक्सर, अपनी नींदें खोता था।
दिखावे के लिए वो, भले ही सख्त रहता था,
मगर मेरी तकलीफों पे, वो मुझसे पहले रोता था।

आज घर में वो पुराना, कोई भी शोर नहीं है,
एक-दूजे से उलझने की, बची वो डोर नहीं है।
समझदारी ने हमें, बहुत सलीके से मिलाया है,
मगर उन तकरारों के बिना, रिश्ते में ज़ोर नहीं है।

उन अजीब सी लड़ाइयों में, हमारी इबादत थी,
एक-दूजे से उलझने की, वो कैसी आदत थी।
लफ़्ज़ों की इस रिश्ते को, कभी ज़रूरत ना पड़ी,
वो खट्टी-मीठी तकरार ही, हमारी सच्ची मोहब्बत थी।



56. दोस्त जो परिवार बन गए

भूमिका: खून के रिश्ते हमें जन्म से मिलते हैं, उन पर हमारा कोई ज़ोर नहीं होता। लेकिन कुछ रिश्ते हम खुद चुनते हैं। ज़िंदगी के सफर में कुछ दोस्त ऐसे टकराते हैं, जो सिर्फ महफ़िलों या अच्छे वक़्त के साथी नहीं होते, बल्कि हमारे हर दर्द और उलझन का हिस्सा बन जाते हैं। धीरे-धीरे वो हमारी आदत,सुकून और हमारा असल परिवार बन जाते हैं। यह नज़्म उन दोस्तों के नाम है, जिनके साथ हमारा खून का कोई नाता तो नहीं होता, लेकिन उनके बिना हमारी ज़िंदगी पूरी तरह अधूरी होती है।

जो खून के रिश्ते हैं, वो ऊपर से आते हैं,
मगर कुछ दोस्त ज़िंदगी में, फरिश्ते बन जाते हैं।
जिनसे नहीं था हमारा, कभी कोई भी नाता,
वो दोस्त ही अब मेरा, परिवार कहलाते हैं।

जहाँ कोई भी नक़ाब, हमें ओढ़ना नहीं होता,
कुछ कहने से पहले, कुछ भी सोचना नहीं होता।
उनके सामने हम, जैसे हैं बिल्कुल वैसे रहते हैं,
वहाँ अपने ही अश्कों को, कभी रोकना नहीं होता।

खून के रिश्ते भी जब, कभी पीछे हट जाते हैं,
ये दोस्त ही मेरी सबसे, मज़बूत ढाल बन जाते हैं।
मेरी हर एक खामोशी को, बिना कहे समझ लेते हैं,
मेरी खातिर ये सारी, दुनिया से लड़ जाते हैं।

उनके घर का दरवाज़ा, मेरे लिए भी खुला है,
उनके हिस्से का दर्द भी, मेरी रूह में घुला है।
अब कैसा खून का नाता, और कैसी ये दोस्ती,
मुझे इन दोस्तों में ही, मेरा परिवार मिला है।

ये वो गहरे रिश्ते हैं, जिन्हें खुद हमने चुना है,
अपने ही भरोसे के धागों से, जिन्हें हमने बुना है।
ये दोस्त नहीं अब तो, मेरी इस जान का हिस्सा हैं,
इनके बिना मेरी ज़िंदगी का, हर एक कोना सूना है।



57. पुराने दोस्तों की तस्वीर

भूमिका: एक पुरानी तस्वीर महज़ कागज़ का टुकड़ा नहीं होती, वो एक ठहरा हुआ वक़्त होती है। जब हम बरसों पुरानी किसी तस्वीर को देखते हैं, तो चेहरे वही होते हैं, लेकिन उनके पीछे के इंसान पूरी तरह बदल चुके होते हैं। तस्वीर में कैद वो बेफिक्र हँसी अब ज़िम्मेदारियों के बोझ तले दब चुकी है। वो आँखें जिनमें कभी आसमान छूने के ख्वाब थे, अब दुनिया की हकीक़तों से थक चुकी हैं। यह नज़्म उसी खोई हुई मासूमियत और उस ठहरे हुए वक़्त के नाम है, जहाँ हम सब साथ थे, और जहाँ हम सब सच में 'ज़िंदा' थे।

पुरानी किताबों में, तस्वीर मिल गई,
गुज़रे हुए लम्हों की, जागीर मिल गई।
चेहरों पे छाई हँसी, अब वो नहीं रही,
हाथों से जो छूट गई, वो लकीर मिल गई।

इन चेहरों पे कैसी, बेफिक्र सी हँसी है,
जैसे कि इसी पल में, ये उम्र फँसी है।
अब मिल भी जाएं तो, वो बात नहीं होती,
इन कागज़ी चेहरों में, मेरी जान बसी है।

आँखों में वो पहले सी, शरारत नहीं रही,
एक दूजे पे मरने की, वो आदत नहीं रही।
सब अपनी ही दुनिया में, उलझे हुए से हैं,
किसी के भी पास अब, वो फुर्सत नहीं रही।

बेवजह मिलने का वो, दौर गुज़र गया,
वो दोस्ती का धागा, जाने किधर गया।
अब तो मुलाकातों में, रस्में ही रह गईं,
तस्वीर का वो सारा, बचपन बिखर गया।

इन कागज़ी चेहरों में, जो एक नूर है,
वो आज के इंसानों से, बहुत दूर है।
हम खो गए हैं दुनिया की, झूठी सी दौड़ में,
जाने इसमें वक़्त का, या मेरा कसूर है।



58. रिश्तेदारों के बीच अकेलापन

भूमिका: खून के रिश्ते वो होते हैं जिन्हें हम सबसे ज़्यादा अपना मानते हैं। लेकिन कई बार इन्हीं रिश्तों के बीच इंसान सबसे ज़्यादा अकेला महसूस करता है। जब हर मुलाकात में सिर्फ दिखावा हो, बातों में मिलावट हो और मुश्किल वक़्त में सब पीठ दिखा जाएं, तो वो भरा-पूरा परिवार भी बेगाना लगने लगता है। यह नज़्म उसी खामोश घुटन और रिश्तों के उस खोखलेपन के नाम है।

अपनों की इस भीड़ में, मैं गुम सा हो गया,
हर एक सगा अपना, बेगाना सा हो गया।
कहने को तो बैठे हैं, हम एक छत के नीचे,
ये खून का ही रिश्ता, अफ़साना सा हो गया।

चेहरों पे सबके यहाँ, झूठी सी हँसी है,
बातों में तो शहद है, पर नफरत बसी है।
कोई भी नहीं पूछता, दिल का यहाँ हाल,
इन खोखले से रिश्तों में, मेरी जान फँसी है।

मुश्किल का कोई वक़्त, जब सामने आता है,
हर एक सगा अपना, नज़रें चुराता है।
खुशियों के दिनों में तो, सब साथ खड़े हैं,
पर दर्द में ये खून भी, पीठ दिखाता है।

मीठी सी इन बातों में, जो ज़हर घोलते हैं,
पीठ के पीछे अक्सर, कुछ और बोलते हैं।
चेहरे पे चढ़ा रखा है, प्यार का नक़ाब,
पर पीठ के पीछे मेरे, राज़ खोलते हैं।

रिश्तों की महज़ एक, रिवायत रह गई,
हर एक मुलाकात में, मिलावट रह गई।
दिल से कोई मिलता नहीं, अपनों की भीड़ में,
बस नाम के इन रिश्तों में, बनावट रह गई।



59. जो हमेशा हमारे लिए खड़ा रहा

भूमिका: हमारी ज़िंदगी में कुछ लोग ऐसे होते हैं जो बिना किसी शोर के, हमारी हर मुश्किल में ढाल बनकर खड़े रहते हैं। हम अक्सर नई चमक-दमक और नए रिश्तों के पीछे भागते हुए उन्हें नज़रअंदाज़ कर देते हैं। लेकिन जब ज़िंदगी चारों तरफ से घेर लेती है और कोई रास्ता नहीं बचता, तब हमें याद आता है कि वही एक शख्स था जो कभी पीछे नहीं हटा। यह नज़्म उसी अनमोल और अनदेखे साए के नाम है।

दुनिया की भीड़ में हम, जिसे भुला देते हैं,
गैरों की खातिर अक्सर, जिसे रुला देते हैं।
सुहानी इन हवाओं में, हमें वो याद नहीं,
हम अपने ही साए को, खुद मिटा देते हैं।

तूफ़ानों के सामने, जो चुपचाप अड़ा रहा,
मेरी हर एक हार से, जो अकेले लड़ा रहा।
गैरों की महफ़िल में, मैं जिसे छोड़ आया था,
वही शख्स मुश्किल में, मेरे साथ खड़ा रहा।

मेरी हर एक मुश्किल में, बस साथ निभाया है,
ज़माने की ठोकरों से, मुझको बचाया है।
उसके इन एहसानों को, मैं कैसे चुकाऊँगा,
मेरी हर एक गलती को, जिसने छुपाया है।

अब वक़्त के इस मोड़ पे, दिल घबराता है,
तन्हाई का ये आलम, मुझको सताता है।
जिसने बिना कुछ बोले, मेरा साथ दिया था,
मेरी बेरुखी का मंज़र, अब मुझे रुलाता है।

मैं झूठी सी दुनिया में, जाने क्या ढूँढता रहा,
जो मेरा अपना था, उसे पीछे छोड़ता रहा।
उस शख्स की अहमियत, मुझे अब समझ आई है,
मैं अपने ही साए से, मुँह को मोड़ता रहा।



60. घर की याद

भूमिका: इंसान अपने सपनो को पूरा करने और पैसे कमाने के लिए घर से दूर शहर तो आ जाता है, लेकिन असल में वह अपना सुकून वहीं उस पुरानी चौखट पर छोड़ आता है। शहर की इस भीड़ में सब कुछ है, लेकिन वो माँ के हाथ का खाना, पिता की वो डांट, और आँगन की वो बेफिक्री कहीं नहीं है। यह नज़्म उसी बंद कमरे की तन्हाई और घर की उस रुला देने वाली याद के नाम है, जहाँ कामयाबी भी एक सज़ा लगने लगती है।

बंद इस कमरे में, जब सन्नाटा छाता है,
घर का वो हर कोना, मुझे बहुत रुलाता है।
पैसों की इस दौड़ में, मैं बहुत दूर आ गया,
अब वो पुराना आँगन, मुझे रोज़ बुलाता है।

यहाँ किसी के भी पास, फ़ुर्सत नहीं होती,
सिर पे किसी के हाथ की, राहत नहीं होती।
बीमार जब होता हूँ, तो तन्हा ही रहता हूँ,
माँ की तरह ये दुनिया, मेरे लिए नहीं रोती।

हम अपनी ही दुनिया में, अब उलझे रहते हैं,
तन्हाई के इस दर्द को, खामोशी से सहते हैं।
पूछता नहीं है कोई, जब हाल मेरे दिल का,
बंद कमरे में अश्क मेरे, आँखों से बहते हैं।

शाम ढले तो घर की, बहुत याद आती है,
वो पुरानी हर एक बात, बहुत सताती है।
तकिए में मुँह छुपाकर, मैं रोज़ ही रोता हूँ,
माँ की वो लोरी अब, मुझे नहीं सुलाती है।

दुनिया की इस अंधी दौड़ में, दूर चला आया हूँ,
घर की उस चौखट को, मैं पीछे छोड़ आया हूँ।
लौट जाना चाहता हूँ, फिर से उसी आँगन में,
जिस मिट्टी से अपना, मैं नाता तोड़ आया हूँ।



VII. इंसान और उसकी ज़िंदगी

61. बचपन कहाँ चला गया

भूमिका: हम सब बचपन में बड़ा होने की जल्दी में रहते हैं। हमें लगता है कि बड़े होकर हम हर फिक्र से आज़ाद हो जाएंगे। लेकिन जब हम सच में बड़े हो जाते हैं, तब पता चलता है कि अनजाने में हमने अपनी ज़िंदगी का सबसे खूबसूरत हिस्सा बहुत पीछे छोड़ दिया है। यह नज़्म उसी खामोश सफर के नाम है, जहाँ हम बिना एहसास हुए ही बड़े हो गए।

ना जाने वो बचपन, कहाँ चला गया,
वो मिट्टी का आँगन, कहाँ चला गया।
मैं बड़ा होने की, बस धुन में ही रहा,
वो बेफिक्र सा सावन, कहाँ चला गया।

खिलौनों की दुनिया, पीछे छूट गई है,
वो कागज़ की कश्ती, कहीं डूब गई है।
मैं उम्र की सीढ़ी, चढ़ता ही गया,
वो मासूम सी हँसी, कहीं रूठ गई है।

किसी ने मुझे ये, बताया नहीं था,
हकीक़त से मुझको, मिलाया नहीं था।
मैं नींद से जागा, तो उम्र बीत गई,
इस दर्द को मैंने, बुलाया नहीं था।

ज़िम्मेदारियों ने मुझे, अब घेर लिया है,
मेरे वक़्त ने मुझसे, मुँह फेर लिया है।
मैं बचपन को ढूँढूँ, तो मिलता नहीं है,
इस उम्र ने मेरा, चैन छीन लिया है।

हँसने और रोने का, दौर गुज़र गया,
वो बचपन का सारा, ख्वाब बिखर गया।
मैं बड़ा होने की, बहुत जल्दी में था,
अब लगता है वक़्त, यहीं ठहर गया।



62. बड़े होने की कीमत

भूमिका: बचपन में हमें लगता था कि बड़े होकर हम अपनी मर्ज़ी के मालिक बन जाएंगे और हर खुशी खरीद लेंगे। पर असल में, बड़े होने की बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ती है। हमारी मासूमियत, हमारी हँसी, और हमारी बेफिक्री सब कुछ ज़िम्मेदारियों की भट्टी में जल जाता है। यह नज़्म उसी दर्द के नाम है, जहाँ समझदारी ने हमसे हमारी सच्ची खुशी छीन ली है।

बचपन की मैंने, जो कीमत चुकाई है,
मासूमियत दे कर, ये उम्र पाई है।
कंधों पे मेरे, बस बोझ रखा है,
हँसी के बदले बस, तन्हाई आई है।

बाज़ार में अब, मेरा वक़्त बिकता है,
चेहरे पे मेरे, बस दर्द टिकता है।
अंदर से मैं, बहुत टूट चुका हूँ,
दुनिया को मेरा, बस रुतबा दिखता है।

ज़िम्मेदारियों में मेरा, बचपन छूटा है,
ख्वाबों का मेरे, हर शीशा टूटा है।
अपनों की खातिर, मैं दौड़ता रहा,
मुझसे ही मेरा, मुकद्दर रूठा है।

रोज़ एक नई मैं, उड़ान भरता हूँ,
गिरने से लेकिन, मैं रोज़ डरता हूँ।
गिर जाऊँगा तो कोई, नहीं उठाएगा,
खुद से ही रोज़, शिकायत करता हूँ।

ज़िम्मेदारियों ने मुझे, अंदर से जला दिया,
बचपन के उस घर को, मैंने भुला दिया।
अब तो बस पैसों की, दौड़ रह गई है,
इस उम्र ने मुझको, खाक में मिला दिया।



63. सपनों का बोझ

भूमिका: सपने वो होते हैं जो हमें उड़ना सिखाते हैं, जो ज़िंदगी को एक नया मकसद देते हैं। लेकिन कभी-कभी यही सपने एक ऐसा पहाड़ बन जाते हैं, जिसके नीचे इंसान खुद को कुचलता हुआ महसूस करता है। जब आसमान छूने की ज़िद रातों की नींद और दिन का सुकून छीन ले, तब वो सपना एक खूबसूरत ख्वाब नहीं, बल्कि पैरों की ज़ंजीर बन जाता है। यह नज़्म उसी घुटन के नाम है, जहाँ कामयाबी की चाहत ही एक सज़ा बन जाती है।

सपनों का ये बोझ, बहुत सताता है,
रातों के अँधेरे में, मुझे रुलाता है।
मंज़िल को पाने की, कैसी ये दौड़ है,
हर एक ख्वाब अब, मुझे डराता है।

सपनों का ये बोझ, अब बहुत भारी है,
आँखों में छाई ये, कैसी लाचारी है।
मंज़िल पे पहुँचने की, ज़िद जो की मैंने,
इस ज़िद पे मैंने, हर खुशी हारी है।

नींदों का वो सुकून, पीछे छूट गया,
ख्वाबों का वो शीशा, अंदर से टूट गया।
मंज़िल की चाहत में, मैं दौड़ता रहा,
मेरा ही वजूद आज, मुझसे ही रूठ गया।

ख्वाबों ने आँखों में, आग लगा दी है,
जीने की मेरी सब, वजह मिटा दी है।
आसमान छूने की, ज़िद जो मैंने की,
सपनों ने मेरी ये, दुनिया जला दी है।

सपनों का मैं अब तो, गुलाम हो गया हूँ,
मंज़िल की राहों में, बेनाम हो गया हूँ।
आँखों में देखे थे, जो भी सवेरे मैंने,
सपनों के बोझ तले, नीलाम हो गया हूँ।



64. सफलता के बाद का खालीपन

भूमिका: दुनिया की नज़र में सफलता एक पहाड़ की चोटी है, जहाँ पहुँचकर सब कुछ मिल जाता है। लेकिन जो उस चोटी पर पहुँचता है, वही जानता है कि वहाँ हवा कितनी सर्द है और इंसान कितना अकेला है। जब हम अपनी सारी उम्र जिस मंज़िल को पाने में लगा देते हैं, और वहाँ पहुँचकर पता चले कि यह तो वो सुकून था ही नहीं जिसकी हमें तलाश थी—तो वो कामयाबी एक जीत नहीं, बल्कि सबसे बड़ी हार लगने लगती है। यह नज़्म उसी खामोश खालीपन के नाम है।

मंज़िल तो मिल गई, पर नींदें छूट गईं,
मेरे ही हाथों से, उम्मीदें टूट गईं।
मैं तो समझता था, सब मुकम्मल हो गया,
पर जीत के जश्न में, खुशियाँ रूठ गईं।

मैंने इस दुनिया में, बहुत कुछ पाया है,
पर इस कामयाबी ने, मुझे रुलाया है।
जिस मुकाम के लिए, मैं दौड़ता ही रहा,
उसी मुकाम पे मैंने, सब गँवाया है।

शोहरत की भीड़ में, मैं तन्हा होता हूँ,
अपनी ही जीत पे, मैं छुप कर रोता हूँ।
दुनिया की नज़रों में, हर खुशी मेरे पास,
पर अपने सुकून को, मैं रोज़ खोता हूँ।

मंज़िल पे पहुँच के, बहुत लाचार हूँ,
अपनी ही ज़िद का मैं, आज शिकार हूँ।
दुनिया को लगता है, मैंने सब जीत लिया,
पर अंदर से मैं तो, अपनी ही हार हूँ।

सफलता का ये ताज, काँटों सा लगता है,
ये भीड़ का शोर भी, सन्नाटा लगता है।
जिस मंज़िल के लिए, मैं उम्र भर दौड़ा,
वो कामयाबी का जश्न, अब झूठा लगता है।



65. असफलता से मुलाक़ात

भूमिका: असफलता को हम अक्सर अपना सबसे बड़ा दुश्मन मान लेते हैं। लेकिन सच तो यह है कि हार एक बहुत सच्ची उस्ताद (teacher) होती है। जीत हमें सिर्फ गुरूर देती है, लेकिन हार हमें हमारी असलियत, अपनों की पहचान और दोबारा खड़े होने की ताक़त देती है। यह नज़्म उसी हार के नाम है, जिसने दुश्मन बनकर नहीं, बल्कि एक उस्ताद बनकर ज़िंदगी का सबसे बड़ा सबक सिखाया।

हार ने मुझको जब, गले लगाया है,
ज़िंदगी का मुझे, सच बताया है।
जीत के नशे में, जो गुरूर छाया था,
मेरी हार ने वो, सब मिटाया है।

हार जब भी मेरे, पास आती है,
सबकी असलियत मुझे, वो दिखाती है।
झूठे चेहरों पे जो, इक नक़ाब होता था,
हार हर एक सच, सामने लाती है।

मेरी हर भूल को, इसने सुधारा है,
डूबती आस को, फिर से उबारा है।
जीत की रोशनी में, जब मैं अँधा था,
हार ने ही दिया, मुझको किनारा है।

ये असफलता मेरी, कोई दुश्मन नहीं है,
मेरी इस हार में, कोई उलझन नहीं है।
इसने उस्ताद बन के, मुझे दुनिया का सच दिखाया,
अब इस हकीक़त में, कोई चुभन नहीं है।

मैं अपनी हार से, अब ना घबराऊँगा,
ठोकरें खा के मैं, फिर से उठ जाऊँगा।
मेरी हर एक कमी, अब मेरे सामने है,
हार कर ही मैं अब, मंज़िलें पाऊँगा।



66. दूसरों से तुलना

भूमिका: दूसरों से अपनी तुलना करना ज़िंदगी की सबसे बड़ी थकान है। जब हम अपनी कामयाबियों को किसी और के पैमाने पर नापने लगते हैं, तो हमारी अपनी खुशियाँ भी बेमानी लगने लगती हैं। इंसान अपने पास मौजूद सफलताँए को भूलकर, हमेशा दूसरों की थाली में झाँकता रहता है। यह नज़्म उसी दिमागी घुटन के नाम है, जहाँ दूसरों से बेहतर बनने की होड़ में हम अपना ही सुकून तबाह कर लेते हैं।

औरों की खुशियों को, देख कर जलता है,
जाने क्यों इंसान, इस तरह गलता है।
अपनी जो सफलताँए हैं, वो नज़र ना आतीं,
तुलना की भट्टी में, ये रोज़ ढलता है।

औरों के महलों की, जो फिक्र करते हैं,
अपने ही घर का, ना ज़िक्र करते हैं।
दुनिया की दौड़ में, जो अंधे हो गए,
ईश्वर का वो कभी भी, ना शुक्र करते हैं।

औरों के ऊँचे से, देख के मकान को,
भूल बैठे हैं हम, अपने आसमान को।
तुलना की आग ने, राख कर दिया है,
सच्ची सी अपनी उस, एक मुस्कान को।

औरों से जीतने का, कैसा खुमार है,
असल में ये अपनी, सबसे बड़ी हार है।
हम अपनी मंज़िलों को, पीछे ही छोड़ आए,
तुलना का ये कैसा, झूठा संसार है।

औरों को देखने में, सब गँवाया है,
इस आदत ने मुझको, बहुत रुलाया है।
अपनी जो खूबियाँ थीं, मैंने भुला दी हैं,
तुलना ने मेरा ही, चैन चुराया है।



67. भागते हुए लोग

भूमिका: आज की दुनिया एक अंधी दौड़ बन चुकी है। हर कोई भाग रहा है, किसी को पीछे छोड़ने के लिए, कुछ पा लेने के लिए। लेकिन इस भागदौड़ में किसी को ये नहीं पता कि आखिर रुकना कहाँ है। मंज़िल का पता नहीं, फिर भी रफ्तार कम नहीं होती। यह नज़्म ज़िंदगी के उसी थका देने वाले सफर के नाम है, जहाँ इंसान ने दौड़ना तो सीख लिया, लेकिन ठहरना भूल गया।

जाने ये सब लोग, कहाँ दौड़ रहे हैं,
पीछे अपने सुकून को, क्यों छोड़ रहे हैं।
मंज़िल का किसी को भी, कुछ पता नहीं है,
अपनी ही साँसों को, क्यों तोड़ रहे हैं।

हर एक शख्स यहाँ, अंधा सा भागता है,
रातों की नींदें गँवा कर, वो जागता है।
रुकने का किसी को भी, कुछ खयाल नहीं,
थक कर ये ज़िंदगी से, दुआ माँगता है।

अपनी ही मंज़िलों से, सब अनजान हैं,
इस अंधी सी दौड़ में, सब हैरान हैं।
रुक कर यहाँ कोई भी, साँस नहीं लेता,
अपनी ही उलझनों में, सब परेशान हैं।

जाने ये ज़िंदगी का, कैसा सफर है,
आँखों में हर एक की, बाकी कसर है।
कुछ भी यहाँ पाकर, सुकून नहीं मिलता,
इस झूठी सी दौड़ का, कैसा असर है।

सच्ची सी अपनी हँसी को, रोज़ खोता है,
मंज़िल पे पहुँच कर भी, छुप के रोता है।
ठहरने की फुरसत उसे, कभी मिलती नहीं,
थक कर वो अपनी ही, लाश ढोता है।



68. बहुत कुछ पा लिया, ख़ुद को खो दिया

भूमिका: ज़िंदगी की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि हम खुद को दांव पर लगाकर वो सब हासिल कर लेते हैं, जिसकी दुनिया तारीफ करती है। लेकिन जब हम उस कामयाबी के शिखर पर पहुँचते हैं, तो पता चलता है कि जिस इंसान ने वो सफर शुरू किया था, वो तो कहीं पीछे ही छूट गया। सब कुछ पा लेने के बाद भी अगर इंसान खुद को ही खो दे, तो वो जीत सबसे बड़ी हार बन जाती है। यह नज़्म उसी खोखली जीत के नाम है।

दुनिया की इस भीड़ में, सब पा लिया है,
पर इस सफर में खुद को, गँवा दिया है।
मैंने जो कुछ भी चाहा, वो मिल गया है,
पर अपनी ही हँसी को, मिटा लिया है।

पैसों की इस दौड़ में, बहुत छूट गया,
अंदर से मेरा वो, आईना टूट गया।
मंज़िल को पाने की, कैसी ये ज़िद थी,
मुझसे ही मेरा अपना, वजूद रूठ गया।

शोहरत की इस भीड़ में, मैं अनजान हूँ,
अंदर से मैं तो बस, एक बेजान हूँ।
दुनिया को लगता है, मैं कामयाब हूँ,
पर भूल बैठा अपनी, मैं पहचान हूँ।

सौदा ये ज़िंदगी का, बहुत महँगा पड़ा है,
मेरा ही साया मेरे, खिलाफ खड़ा है।
सब कुछ तो खरीद लिया, इस बाज़ार में,
पर अपनी ही रूह को, बेजान किया है।

लौटना भी चाहूँ तो, अब लौट ना सकूँगा,
खुद से मैं अपनी, नज़रें मिला ना सकूँगा।
मैंने ही अपना यहाँ, जो कत्ल किया है,
अब मैं इस दर्द को, मिटा ना सकूँगा।



69. उम्र बढ़ती रही

भूमिका: उम्र का बढ़ना एक खामोश सफर है। हम कल की फिक्र में इतने उलझे रहते हैं कि हमें एहसास ही नहीं होता कि कब जवानी ढल गई और झुर्रियों ने चेहरे पर अपना डेरा डाल लिया। आईने में जब हम खुद को देखते हैं, तो एक अजनबी नज़र आता है। यह नज़्म उसी बीतते हुए वक़्त और ढलती हुई उम्र के खामोश दर्द के नाम है।

उम्र का ये दरिया, बहता ही गया,
हाथों से मेरे वक़्त, फिसलता ही गया।
मैं कल की फिक्र में, उलझा ही रहा,
और आज मेरा चुपचाप, ढलता ही गया।

चेहरे पे झुर्रियों का, अब पहरा सा है,
आँखों में उदासी का, रंग गहरा सा है।
आईने में खुद को मैं, पहचानता नहीं,
ज़िंदगी का सफर अब, ठहरा सा है।

बालों में सफेदी सी, अब छाने लगी है,
मौत की आहट भी, पास आने लगी है।
कल तक जो जवानी, मेरा गुरूर थी,
वही अब मुझको, बहुत सताने लगी है।

पैरों में पहले सी, ताक़त नहीं है,
दिल में भी अब कोई, चाहत नहीं है।
ज़िंदगी ने बहुत कुछ, दिखा दिया है,
साँसों में अब वो, राहत नहीं है।

ज़िंदगी की दौड़ में अब, थक गया हूँ,
रास्तों के हर एक मोड़, पे रुक गया हूँ।
मैं तो अपनी ही कहानी, भूल बैठा हूँ,
वक़्त के इन फैसलों पे, झुक गया हूँ।



70. ज़िंदगी से एक सवाल

भूमिका: जब इंसान ज़िंदगी की अंधी दौड़ में भागते-भागते थक जाता है, तो एक वक़्त ऐसा आता है जब वो सब कुछ छोड़कर बस ज़मीन पर बैठ जाना चाहता है। उस पल में कोई शिकायत नहीं होती, सिर्फ एक सीधा सा सवाल होता है—"आखिर तू चाहती क्या है?" यह नज़्म उसी थकान और ज़िंदगी के साथ रूह के उसी सीधे संवाद के नाम है, जहाँ हम हिसाब माँगने नहीं, बस अपना सच जानने खड़े होते हैं।

ज़िंदगी तू ही बता, क्या चाहती है,
रोज़ तू हर एक पल, क्यों आज़माती है।
तेरे हर एक सफर में, साथ चलता हूँ,
फिर मुझे तू इस कदर, क्यों सताती है।

तूने अंदर से मुझे, किस तरह तोड़ा है,
तन्हाई के रास्तों पे, ले जा के छोड़ा है।
मैं तो हमेशा तेरे, साथ खड़ा था,
तूने हर एक मोड़ पे, मुँह क्यों मोड़ा है।

जाने ये तेरी रज़ा का, कैसा सफर है,
मेरे हर एक ख्वाब पे, तेरा कहर है।
मैं तो बस सुकून की, आस में रहा,
पर तेरी हर बूँद में, घुला ज़हर है।

मेरे दिल में बस यही, एक सवाल है,
ज़िंदगी से आज मुझे, बहुत मलाल है।
तूने मेरी राहों में, क्या बिछाया है,
ये तेरी हकीक़त है या, कोई नया जाल है।

ज़िंदगी तू आज अपना, सच बयान कर,
मेरे इन सवालों को, कुछ आसान कर।
मैं इस दुनिया में महज़, एक मेहमान हूँ,
मुझपे बस तू इतना सा, एहसान कर।



VIII. वो बातें जो हम कभी नहीं कहते

71. कुछ लोग

भूमिका: कुछ लोग बिना किसी नाम या पहचान के हमारी ज़िंदगी में आते हैं। वो खून के रिश्ते नहीं होते, ना ही दोस्ती के दायरों में बंधे होते हैं। फिर भी, जब हम टूटते हैं, तो वो अपनों से भी बढ़कर हमें सँभालते हैं। यह नज़्म उन बेनाम रिश्तों के नाम है, जिनका दुनिया की नज़र में कोई नाम नहीं, पर रूह के लिए जिनके मायने सबसे गहरे होते हैं।

बेनाम सा एक रिश्ता, भी पास रहता है,
बिन बोले ही वो, बहुत कुछ कहता है।
ना कोई वादा है, ना कोई बंधन है,
मेरा हर एक दर्द, खामोशी से सहता है।

अनजान सी राहों में, कोई जब आता है,
रूह के बहुत अंदर, वो उतर जाता है।
उसे रोकने का भी, कोई हक नहीं होता,
वो बिन कहे ही, अपना फर्ज़ निभाता है।

पास जब भी वो, आ के ठहरता है,
ये बेनाम सा रिश्ता, और भी संवरता है।
मतलब के बाकि रिश्तों में, बड़ी घुटन है,
साँसों का ये बोझ भी, थोड़ा उतरता है।

मेरी हर एक कमी को, वो छुपाता है,
दुनिया के हर फरेब से, वो बचाता है।
जिसे मैंने कभी भी, कोई नाम ना दिया,
वही मुझे हर बार, सीने से लगाता है।

इन बेनाम रिश्तों में, सुकून सा दिखता है,
क्यूंकि दुनिया के बाज़ार में, हर रिश्ता बिकता है।
कोई नाम नहीं होता, ऐसे कुछ रिश्तों का,
बस इन बेनामों का, साथ ही टिकता है।



72. अजनबी दोस्त

भूमिका: ज़िंदगी का सबसे बड़ा दर्द किसी अजनबी का बिछड़ना नहीं होता, बल्कि एक ऐसे इंसान का अजनबी बन जाना होता है, जो कभी आपकी हर धड़कन से वाकिफ़ था। जब वो इंसान पास से गुज़रता है और आँखें नहीं मिलाता, तो वो खामोशी किसी भी शोर से ज़्यादा चुभती है। यह नज़्म उस सफर के नाम है, जहाँ दो लोग सब कुछ जानने के बाद भी, एक-दूसरे के लिए अजनबी बन जाते हैं।

हम बिना कुछ कहे ही, दूर हो गए,
खामोशी की इस ज़ंजीर में, चूर हो गए।
जो कभी मेरी हर, साँस को पढ़ता था,
आज अजनबी बनने को, मजबूर हो गए।

मैं आज भी उसकी, हर आदत जानता हूँ,
भीड़ में भी मैं उसे, पहचानता हूँ।
पर अब हाल पूछने का, हक नहीं रहा,
मैं चुपचाप अपनी इस, हार को मानता हूँ।

महफिल में हम अक्सर, नज़रें चुराते हैं,
एक दूजे से अपना, दर्द छुपाते हैं।
मेरी हर एक बात, वो आज भी समझता है,
फिर भी हम गैरों सा, फर्ज़ निभाते हैं।

हम दोनों में से कोई, कभी नहीं रूठा,
जाने कैसे फिर ये, विश्वास हमारा टूटा।
हम अपनी ही दुनिया में, अब उलझ गए हैं,
बस खामोशी से अपना, वो रिश्ता है छूटा।

हम एक दूजे के, राज़दार आज भी हैं,
इस टूटे रिश्ते के, कर्ज़दार आज भी हैं।
पर कोई भी कदम, अब आगे नहीं बढ़ता,
अपनी ही नज़रों में, गुनहगार आज भी हैं।



73. बेनाम रिश्ता

भूमिका: दुनिया हर एहसास को एक नाम देना चाहती है। दोस्ती, प्यार, या रिश्तेदारी—समाज सिर्फ उन्हीं दायरों को समझता है जिन पर कोई मोहर लगी हो। लेकिन ज़िंदगी में कुछ रिश्ते ऐसे होते हैं, जो इन सब नामों से परे होते हैं। वो सच्चे होते हैं, गहरे होते हैं, पर उनका कोई नाम नहीं होता। यह नज़्म उसी बेनाम एहसास के नाम है, जिसे हम जी तो लेते हैं, पर दुनिया को कभी समझा नहीं पाते।

कुछ रिश्तों का कोई, भी नाम नहीं होता,
इन रूह के धागों का, मुकाम नहीं होता।
ये दुनिया के हर, दायरे से बाहर हैं,
इस दर्द का कोई, अंजाम नहीं होता।

ना दोस्ती की कोई, दीवार बीच में थी,
ना प्यार की कोई, दरकार बीच में थी।
हम दोनों बिना किसी, वादे के जुड़े थे,
एक अनकही सी ही, पुकार बीच में थी।

दुनिया की हर नज़र, से इसे बचाते थे,
हम अपनी एक अलग, ही दुनिया सजाते थे।
इन खोखले रिश्तों से, हमें बगावत थी,
हम एक दूजे में ही, सुकून पाते थे।

ये रिश्ता हमारे, बीच का राज़ रहा,
खामोश होकर भी ये, एक आवाज़ रहा।
रोने की भी हमको, इज़ाज़त नहीं मिली,
बिछड़ने का ये दर्द, बेआवाज़ रहा।

हम दुनिया को अपना, क्या दर्द बताते,
इस टूटे रिश्ते का, क्या नाम गिनाते।
जिसका दुनिया के लिए, वजूद नहीं था,
हम ऐसे रिश्ते का, क्या शोक मनाते।



74. दूर होकर भी पास

भूमिका: दुनिया मानती है कि फासले रिश्तों को कमज़ोर कर देते हैं। लेकिन कुछ रिश्ते जिस्मों के मोहताज नहीं होते, वो रूह के धागों से बंधे होते हैं। ऐसे लोग जब मीलों दूर चले जाते हैं, तब भी उनकी खामोशी हमारे पास ही गूँजती है। यह नज़्म उन कागज़ी दूरियों के नाम है, जो दो लोगों के जिस्मों को तो बाँट सकती हैं, पर उनकी रूह को कभी जुदा नहीं कर पातीं।

जिस्मों की दूरी का, यहाँ क्या दस्तूर है,
तू मेरी नज़रों से, आज बहुत दूर है।
मैं जब भी अपना ये, आईना देखता हूँ,
मेरे इस अक्स में, तेरा ही नूर है।

हमारी इस खामोशी में, कैसा ये साज़ है,
बिना कुछ बोले भी, एक गूँजती आवाज़ है।
ये दुनिया तो महज़, लफ़्ज़ों को पढ़ती है,
रूह के धागों का, कैसा ये राज़ है।

तुझसे दूर होने का, मलाल नहीं होता है,
मेरी इन आँखों में, सवाल नहीं होता है।
तेरी याद मेरे अंदर, यूँ उतर गई है,
तेरे बिना दिल ये, बेहाल नहीं होता है।

तेरा अक्स मेरे अंदर, बहुत ही गहरा है,
मेरी हर धड़कन पे, तेरा ही पहरा है।
ये दूरियाँ इस रिश्ते का, क्या ही बिगाड़ेंगी,
मेरे हर ज़ख्म पे, रंग तेरा ठहरा है।

तू जहाँ भी रहे, रूह के ही पास है,
इस बेनाम रिश्ते का, अलग ही एहसास है।
कागज़ की इन दूरियों की, कोई बिसात नहीं,
मेरी इस तन्हाई में भी, तू मेरे पास है।



75. माँ भी एक इंसान है

भूमिका: दुनिया की नज़र में माँ एक ऐसा फरिश्ता है जो कभी थकता नहीं, जिसके अपने कोई शौक नहीं होते, और जिसका जन्म सिर्फ अपने बच्चों के लिए हुआ है। पर इस महान रुतबे के पीछे एक औरत भी साँस लेती है। एक ऐसी औरत जिसने अपनी अनगिनत ख्वाहिशों का गला सिर्फ इसलिए घोंट दिया, ताकि हम उड़ सकें। यह नज़्म उसी पे है जिसे हमने हमेशा सिर्फ एक 'माँ' के रूप में देखा, उसकी अपनी पहचान को कभी नहीं समझा।

माँ के रुतबे में, वो छुप जाती है,
अपनी सारी खुशियाँ, वो कब जी पाती है।
उसके अंदर भी, एक औरत का अक्स है,
टूटे हुए ख्वाबों में भी, वो लोरी गाती है।

वो भी किसी साए से, अक्सर डरती है,
अपनी कुछ ख्वाहिशें वो, मुट्ठी में भरती है।
हमने उसको बस, एक माँ ही माना था,
वो औरत ख्वाबों पे, आज भी मरती है।

उसने भी अपने शौक, कई भुलाए हैं,
दिल के एक कोने में, ख्वाब दबाए हैं।
उसके भी तो कुछ रंग, बहुत पुराने थे,
जो उसने दुनिया की, नज़रों से छुपाए हैं।

वो भी अंदर से, बहुत अकेली होती है,
अपनी तन्हाई में वो, छुप कर रोती है।
सीने में उसके भी, एक गहरी उदासी है,
अपने टूटे ख्वाबों को, अक्सर वो ढोती है।

माँ के रुतबे में, वो औरत रहती है,
उन टूटे ख्वाबों का, वो दर्द सहती है।
उसका भी तो अपना, एक अलग वजूद है,
अपनी हसरतें वो बस, खुद से कहती है।



76. पिता भी कभी बच्चे थे

भूमिका: हम पिता को हमेशा एक सख़्त दीवार, एक मज़बूत पहाड़ की तरह देखते हैं। हमें लगता है कि उन्हें दर्द नहीं होता, उन्हें डर नहीं लगता। लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि वो दीवार बनने से पहले, वो भी एक इंसान थे। उनके अंदर भी एक बच्चा था, जिसके कुछ अपने शौक थे, जो वक़्त और ज़िम्मेदारियों की आँच में कहीं जल गए। यह नज़्म उस पिता के अंदर छुपे हुए उस बच्चे से एक रू-ब-रू मुलाकात है।

उनके चेहरे पे हमेशा, एक सख्त पहरा है,
उनकी हर एक खामोशी, में दर्द गहरा है।
हमने उनको बस अपना, खुदा ही माना था,
उनके मज़बूत कंधों पे, ज़िम्मेदारियों का सेहरा है।

उनके अंदर भी कभी, एक बच्चा रहता था,
अपना हर एक दर्द, वो चुपचाप सहता था।
ज़िम्मेदारियों के इस बोझ, ने उसे बदला है,
वो भी अपने दिल की, हर बात कहता था।

उसने अपने हर एक, शौक को मारा है,
मेरी खातिर ही अपना, हर दिन गुज़ारा है।
एक पल भी वो, अपने लिए नहीं जिया,
मेरी ज़िंदगी को उसने, बहुत ही सँवारा है।

रातों को वो भी, कभी तो डरता होगा,
तन्हाई में वो भी, कभी तो बिखरता होगा,
हमने तो बस उसको, एक पहाड़ ही समझा,
वो भी अपने टूटे, ख्वाबों पे मरता होगा।

आज मैंने उसके उस, दर्द को जाना है,
उस पिता के अंदर, एक इंसान पहचाना है।
उसने मेरी खातिर, बहुत कुछ तो खोया है,
मैंने आज उस बच्चे, को अपना माना है।



77. बचपन की लड़ाई

भूमिका: बचपन में भाई-बहनों के बीच होने वाले झगड़े अक्सर हमें उस वक़्त बहुत बड़े लगते हैं। लेकिन जब हम बड़े होते हैं और दुनियादारी की झूठी नज़ाकत (politeness) में घिर जाते हैं, तब एहसास होता है कि उन लड़ाइयों में कितनी सच्चाई और कितना अपनापन था। यह नज़्म उसी खामोशी और बनावटीपन पर एक चोट है, जो उम्र बढ़ने के साथ हमारे रिश्तों में आ जाती है।

बचपन के उन दिनों, में गहरा प्यार था,
एक दूजे पे अपना, वो पूरा अधिकार था।
आज की इस नज़ाकत, में वो बात नहीं,
उन नादान से झगड़ों, में भी संसार था।

खिलौनों के लिए अक्सर, हम रोज़ लड़ते थे,
अपनी छोटी ज़िद लेकर, हम रोज़ अड़ते थे।
हमारे मासूम से दिलों, में मैल नहीं था,
हम रोने के बाद, फिर साथ पढ़ते थे।

आज एक दूजे से, हम लड़ नहीं पाते,
अपने वो पुराने हक, हम जता नहीं पाते।
बीच में हमारे अब, एक फासला सा है,
इस झूठे पर्दे को, हम हटा नहीं पाते।

उस शोर शराबे से, ये खामोशी भारी है,
हर एक रिश्ते में, अब बस दुनियादारी है।
हम बड़े होकर के, बहुत दूर हो गए,
बचपन की वो लड़ाई, ही सबसे प्यारी है।

हम दोनों ने लड़ना, जब से छोड़ दिया,
एक दूजे से अपना, रुख ही मोड़ दिया।
अब लफ़्ज़ों में कैसी, अजीब सी बंदिश है,
इस खामोश अदब ने, सब कुछ बदल दिया।



78. कुछ दूरियाँ

भूमिका: हमें लगता है कि रिश्तों में जितनी नज़दीकी होगी, वो उतने ही मज़बूत होंगे। लेकिन हकीकत में, हद से ज़्यादा करीब आना अक्सर रिश्तों की अहमियत को खत्म कर देता है। जैसे आग को जलने के लिए थोड़ी हवा की जगह चाहिए होती है, वैसे ही रिश्तों को भी साँस लेने के लिए कुछ फासलों की ज़रूरत होती है। यह नज़्म उन दूरियों के नाम है, जो दूरियाँ दरअसल हमारे रिश्तों को टूटने से बचाती हैं।

बहुत करीब आने से, रिश्ते जल जाते हैं,
एक दूजे की नज़रों से, फिसल जाते हैं।
रिश्तों में कुछ फासले, रखना भी लाज़िमी था,
वरना लोग एक पल में, बदल जाते हैं।

दूरियों से ही ये, रिश्ता निखरता है,
हर एक जज़्बात और भी, सँवरता है।
हद से ज़्यादा करीब आना, एक भूल है,
फिर आँखों से वो इंसान, उतरता है।

धागे को ज़्यादा खींचो तो, टूट जाता है,
इंसान बहुत पास आकर भी, रूठ जाता है।
रिश्तों को ज़िंदा रखने का, यही कायदा था,
वरना करीबियों से भी साथ, छूट जाता है।

दूरियों का ये पर्दा, कुछ तो सिखाता है,
हमें एक दूजे की, अहमियत बताता है।
हर वक़्त की मौजूदगी, घुटन सी लगती थी,
ये फासला ही इस रिश्ते को, निभाता है।

इस रिश्ते को बचाने की, ये मजबूरी है,
हमारे दरमियाँ जो ये, थोड़ी सी दूरी है।
बहुत करीब आने से, आग बुझ जाएगी,
कद्र ज़िंदा रखने को, फासला ज़रूरी है।



79. अधूरा अलविदा

भूमिका: जब कोई बिना कुछ कहे चला जाता है, तो वो खामोशी ताउम्र एक बोझ बन जाती है। एक मुकम्मल अलविदा इंसान को आगे बढ़ने का हौसला देता है, लेकिन अधूरा अलविदा आपको उसी मोड़ पर बाँध देता है। यह नज़्म उसी खालीपन और उस झूठी उम्मीद के नाम है, जो बिना अलविदा कहे टूट जाने वाले रिश्तों के हिस्से में आती है।

उस आखिरी मुलाकात का, कोई अंजाम नहीं था,
लबों पे उस वक़्त कोई, पैगाम नहीं था।
अचानक ही हमने अपने, रास्ते बदल लिए,
इस बेनाम रिश्ते का कोई, मुकाम नहीं था।

आँखों में कई बातें, अनकही सी रह गईं,
हमारी वो सारी कसमें, खामोशी में बह गईं।
मुड़ कर देखने की, मोहलत भी ना मिली,
बिना कुछ कहे ही, दूरियाँ सब सह गईं।

अधूरी सी बात का, दर्द बहुत गहरा है,
मेरी इन खामोशियों पे, यादों का पहरा है।
एक आखिरी बार मुड़कर, देखना तो चाहिए था,
हमारे इस अधूरेपन पे, वक़्त वहीं ठहरा है।

शायद किसी मोड़ पे, वो वापस लौट आएगा,
इस अधूरे से सफर को, फिर से सजाएगा।
ये झूठी सी उम्मीद, सीने में चुभती है,
बिना अलविदा कहे ये दिल, कैसे मान जाएगा।

ये अधूरा अलविदा ही, मेरे साथ रहता है,
खामोशी का ये दरिया, मेरे अंदर बहता है।
अब इसके मुकम्मल होने की, कोई आस नहीं,
अधूरा सा ये सफर, बहुत कुछ कहता है।



80. वक्त का फेर

भूमिका: वक़्त का सबसे बड़ा सितम यह नहीं कि वो गुज़र जाता है, बल्कि यह है कि वो लोगों को बदल देता है। जिन आँखों में कभी हम अपना अक्स देखते थे, एक दिन वो हमें अजनबियों की तरह देखने लगती हैं। यह नज़्म वक़्त के उसी क्रूर खेल पर है, जहाँ सब कुछ वही रहता है, बस वो इंसान हमारा नहीं रहता।

वक़्त की फितरत का, अलग ही दस्तूर है,
सामने खड़ा वो इंसान, आज बहुत दूर है।
हमने उस चेहरे को, अपना अक्स माना था,
आज उसकी नज़रों में, अजनबी सा गुरूर है।

वो चेहरा वही है, पर इंसान बदल गया,
हमारे दरमियाँ का वो, सारा आसमान बदल गया।
हमने तो बस वक़्त, को गुज़रते देखा था,
आज उस रिश्ते का, हर अरमान बदल गया।

कोई शोर नहीं हुआ, बस खामोशी छाई है,
इस बदलते वक़्त ने, कैसी चोट पहुँचाई है।
कल तक जो शख्स, बहुत ही अपना था,
आज उसकी बातों में, गहरी सी जुदाई है।

हम पुरानी यादों में, आज भी रहते हैं,
अपने इस दर्द को, हम चुपचाप सहते हैं।
वक़्त का ये फेर, बहुत कुछ बदल गया,
इन आँखों से अब, खामोश अश्क बहते हैं।

ये वक़्त इंसान को, अक्सर अजनबी बनाता है,
वो सब कुछ चुपचाप, बस बदल जाता है।
हम तो अपने पुराने, कल में ठहरे थे,
पर ये गुज़रता वक़्त, सब कुछ मिटाता है।



IX. बेनाम एहसास

81. कहना कुछ और था

भूमिका: हम अक्सर अपनी सबसे गहरी भावनाओं को दुनिया से छुपा जाते हैं। दिल में एक पूरा समंदर होता है, लेकिन जब बोलने का वक़्त आता है, तो हम होठों से बस कोई आम सी, झूठी बात कह देते हैं। यह नज़्म उसी घुटन और उस अनकहे दर्द के नाम है, जब हमें कहना कुछ और होता है, पर हम खामोशी या दुनियादारी के पीछे छुप जाते हैं।

लफ़्ज़ों में एक अलग ही, कहानी गढ़ी थी,
होठों पे एक झूठी सी, मुस्कान पड़ी थी।
कहना कुछ और था, मुझे उस पल में,
मेरी ये खामोशी एक, दीवार सी खड़ी थी।

दिल की गहराई में, एक बात दबाई है,
होठों तक आकर वो, बात लौट आई है।
अंदर के उस शोर को, दुनिया नहीं सुनती,
इस अनकहे दर्द ने, मेरी नींद उड़ाई है।

हम अपने ही सच से, अक्सर मुकरते हैं,
अपनी इस खामोशी से, हम बहुत डरते हैं।
कहना कुछ और था, पर चुप ही रहे हम,
झूठी सी इन बातों में, जज़्बात मरते हैं।

सीने में जज़्बातों का, तूफ़ान सा होता है,
दिल अंदर ही अंदर, छुप कर रोता है।
अल्फाज़ों की भीड़ में, मैं बहुत अकेला हूँ,
ये अनकहा दर्द ही, इंसान को खोता है।

एक अजीब सी घुटन, मेरे साथ रहती है,
ये अनकही सी बात, हर दर्द सहती है।
हमेशा एक अजनबी, मैं बन के मिला हूँ,
पर मेरी हर खामोशी, बहुत कुछ कहती है।



82. ख़ुशी में उदासी

भूमिका: ज़िंदगी के सबसे खूबसूरत पलों में भी, कभी-कभी एक अजीब सी उदासी मन को घेर लेती है। ऐसा लगता है जैसे हमें इस बात का डर सता रहा हो कि ये खुशी बहुत जल्दी खत्म हो जाएगी, या शायद उस जश्न में किसी अपने की कमी अचानक खलने लगती है। यह नज़्म उसी बेनाम उदासी के नाम है, जो हँसी के बीच दबे पाँव आती है।

हर एक हँसी में, एक अजीब डर है,
इस भरी महफिल में, सूना मेरा मन है।
जश्न के माहौल में, दिल क्यों घबराया,
खुशियों के मौसम में, दर्द का असर है।

होठों पे मुस्कुराने की, एक झूठी आदत है,
अंदर ही अंदर होती, एक अजीब बगावत है।
दुनिया को लगता है, हम बहुत खुश होंगे,
इन खुशियों के पीछे, दर्द की मिलावट है।

सुकून के पलों में, कमी सी लगती है,
आँखों में एक पुरानी, नमी सी जगती है।
जब भी कोई खुशी, मेरे पास आती थी,
ये उदासी भी मेरे, अंदर ही सुलगती है।

इस खुशी के जाने का, खौफ सताता है,
ये मन अंदर ही अंदर, बहुत घबराता है।
हम पूरी तरह से, कभी हँस नहीं पाते,
ये अनकहा सा दर्द, दिल को रुलाता है।

मेरी हँसी पे आज, दर्द का पहरा है,
ये अंदर का खालीपन, बहुत ही गहरा है।
हम इस उदासी से, बच ही नहीं पाए,
खुशियों पे उदासी का, ये खामोश चेहरा है।



83. पुराना ख़ुद

भूमिका: जब हम बरसों बाद किसी पुरानी जगह लौटते हैं, तो वहाँ की दीवारों और रास्तों में हमें अपना ही एक पुराना अक्स नज़र आता है। ऐसा लगता है जैसे हमारा बीता हुआ कल आज भी वहीं हमारा इंतज़ार कर रहा हो। यह नज़्म उसी 'पुराने खुद' से अचानक होने वाली उस खामोश और भावुक मुलाकात के नाम है, जहाँ हम अपने ही बीते हुए कल का सामना करते हैं।

इन पुराने रास्तों पे, अक्स मेरा रहता है,
गुज़रा हुआ मेरा कल, खामोशी में बहता है।
मैंने अपने पुराने रूप को, यहाँ देखा था,
वो पुराना सा मैं, मुझसे कुछ कहता है।

मैं अपना पुराना साया, आज यहाँ पाता हूँ,
बीते हुए उन पलों में, लौट मैं जाता हूँ।
वो मासूम सी मूरत, मुझे देख रही थी,
मैं उस पुराने खुद से, नज़रें चुराता हूँ।

वक़्त के साथ मेरा, वो रूप बदल गया,
ज़िंदगी की इस धूप में, बचपन ढल गया।
उस पुराने वजूद की, निशानी नहीं बची,
मेरे हाथों से वो, गुज़रा कल फिसल गया।

वो मुझसे मेरी दास्तान, आज भी पूछता है,
मुझको आज इस हाल में, देखकर रूठता है।
मैंने दुनिया की खातिर, खुद को बदल लिया,
ये सोचकर मेरे अंदर, कुछ तो टूटता है।

मैं अपने पुराने कल से, दूर हो गया,
दुनिया की इस भीड़ में, मैं तो खो गया।
इस मुलाकात का कोई भी, अब वजूद नहीं,
मेरा वो पुराना साया, चुपचाप वहीं रह गया।



84. वो आवाज़

भूमिका: ज़िंदगी के शोर में हम अक्सर लोगों को भुला देते हैं, लेकिन कुछ आवाज़ें हमारे ज़हन में कहीं बहुत गहरी दबी रह जाती हैं। सालों बाद जब अचानक वो आवाज़ कानों में पड़ती है, तो वो महज़ एक शोर नहीं होती, बल्कि गुज़रे हुए कल का एक पूरा बंद दरवाज़ा खोल देती है। यह नज़्म उसी एक आवाज़ के नाम है, जो पल भर में बरसों पुरानी यादों को फिर से ज़िंदा कर देती है।

कानों में आज पुरानी, कोई आवाज़ आई है,
रूह के अंधेरे में, जैसे शमा जलाई है।
एक बंद दरवाज़ा, आज अचानक खुल गया,
इस अजनबी गूँज ने, मेरी नींद उड़ाई है।

लफ़्ज़ों से ज़्यादा उसका, वो लहज़ा याद है,
इस खामोश वीराने में, कोई तो आबाद है।
ऐसा लगा किसी ने, मेरा नाम पुकारा हो,
इस आवाज़ में छुपी, एक पुरानी फरियाद है।

आँखें बंद करते ही, मंज़र लौट आता है,
गुज़रे हुए कल का, दर्द फिर जगाता है।
हमने तो उस रास्ते को, पीछे छोड़ दिया,
पर वो पुराना लहज़ा, मुझे पास बुलाता है।

ये आवाज़ मेरे अंदर, ज़हर सी उतर गई,
मेरी बची हुई हिम्मत, पल में बिखर गई।
लगा था कि मुझे अब, फर्क नहीं पड़ेगा,
पर ये पुरानी आवाज़, बहुत कुछ कर गई।

आवाज़ का ये साया, मेरे साथ रहता है,
सीने में एक दर्द, बन कर बहता है।
वो शख्स अब किसी, और दुनिया का है,
पर उसका ये लहज़ा, मुझसे कुछ कहता है।



85. अजनबी में ख़ुद

भूमिका: ज़िंदगी के सफर में कभी-कभी हम किसी ऐसे अजनबी से टकराते हैं, जिससे हमारा कोई वास्ता नहीं होता। लेकिन उसकी आँखों में, या उसकी खामोशी में, हमें अपना ही अक्स और अपना ही छिपा हुआ दर्द नज़र आता है। यह नज़्म उसी बेनाम एहसास के नाम है, जहाँ एक अनजान चेहरे में हमें अपनी ही तन्हाई और अपना खुद का वजूद दिखाई देता है।

इस भीड़ में अजनबी का, चेहरा नज़र आया,
उसकी खामोश आँखों में, अपना अक्स पाया।
हमारा आपस में कोई, वास्ता नहीं था,
उसके उस खालीपन ने, मेरा दर्द जगाया।

उसकी आँखों का वीराना, सब कुछ बताता है,
वो मेरी ही तरह, खामोश नज़र आता है।
हम दोनों ने कोई भी, बात नहीं की,
पर उसका वो दर्द, मुझे समझ आता है।

उसके चेहरे पे भी, मेरी सी तन्हाई है,
उसने भी किसी से, गहरी चोट खाई है।
हम दोनों इस सफर में, बिल्कुल अनजान थे,
उसकी इस खामोशी में, मेरी ही परछाई है।

उसकी मायूसी में मुझे, अपनी कमी दिखती है,
उसकी आँखों में मेरी, ही नमी दिखती है।
मैंने इस अजनबी का, नाम भी नहीं जाना,
पर उसमें मुझे मेरी, ज़िंदगी दिखती है।

ये बेनाम सा एहसास, बहुत गहरा हो गया,
एक अजनबी इंसान, दर्द का चेहरा हो गया।
हम अपनी राहों पे, खामोशी से चल दिए,
मेरा पुराना दर्द आज, फिर हरा हो गया।



86. वो एक दिन

भूमिका: ज़िंदगी में कुछ दिन बिल्कुल आम होते हैं। कोई बड़ी बात या जश्न नहीं होता, फिर भी वो एक दिन हमारी यादों में हमेशा के लिए दर्ज हो जाता है। वक़्त गुज़र जाता है, लेकिन वो मामूली सा पल ज़हन में ताज़ा रहता है। यह नज़्म उसी बेनाम एहसास के नाम है, जहाँ एक साधारण सा दिन हमारी सबसे कीमती याद बन जाता है।

वो एक मामूली दिन, ज़हन में ठहर गया,
बिना कुछ कहे ही, रूह में उतर गया।
उस रोज़ कोई भी, खास बात नहीं हुई,
पर वो पल मेरे, अंदर घर कर गया।

वो एक आम दिन, आज भी महकता है,
कोई पुराना सा अश्क, आँखों में छलकता है।
उस रोज़ का मौसम, बहुत ही खामोश था,
आज भी वो पल, दिल में धड़कता है।

उस दिन ना कुछ, खत्म ना शुरू हुआ,
एक गुमनाम पल ने, मेरी रूह को छुआ।
हम खामोशी से अपनी, राहों पे चल दिए,
वो आम सा दिन, यादों में जवां हुआ।

वो बिना वजह ही, ज़हन पे छा गया,
एक गुमनाम पल, मेरी रूह में आ गया।
ज़िंदगी में और भी, कई बड़े दिन आए,
पर वो आम दिन, दिल को भा गया।

वो आम सा दिन, एक खास निशानी है,
मेरे गुज़रे हुए कल, की यही कहानी है।
ना जाने क्यों मैं, उसे भूल नहीं पाता,
उस मामूली पल में, एक बात रूहानी है।



87. अचानक याद

भूमिका: ज़िंदगी में हम अक्सर खुद को यह समझा लेते हैं कि हमने किसी को भुला दिया है। हम बहुत आगे बढ़ जाते हैं। लेकिन फिर अचानक, किसी खुशबू, किसी धुन या किसी मामूली सी आहट से वो पूरी की पूरी याद एक पल में वापस लौट आती है। यह नज़्म उसी एक पल के नाम है, जो हमारी सालों की खामोशी और भूल जाने के गुरूर को पल भर में तोड़ देता है।

मुझे लगा था मैंने, उसे भुला दिया है,
पुरानी यादों को मैंने, अब सुला दिया है।
अचानक एक साए ने, दस्तक दी,
इस छोटे से पल ने, रुला दिया है।

ज़हन में दबी हुई, वो बात लौट आई,
आज फिर से मेरी, वही रात लौट आई।
मैं तो उस दर्द, को भूल चुका था,
इन आँखों में पुरानी, वो बरसात लौट आई।

एक अजीब सी खुशबू, मुझे महका गई,
वो पुरानी सी सूरत, फिर बहका गई।
मैंने तो उस रिश्ते, को भुलाया था,
ये अचानक सी याद, मुझे तड़पा गई।

मैंने उस गुज़रे कल, को बहुत छुपाया,
अपने इस खामोश मन, को बहुत समझाया।
मुझे लगा मेरी मंज़िल, अब बदल चुकी है,
आज एक आहट ने, फिर सब याद दिलाया।

एक छोटी सी आहट, ने भ्रम तोड़ दिया,
मेरे भूलने के दावे, को पीछे छोड़ दिया।
अब इस खामोशी में, मेरा क्या होगा,
एक पल ने मेरा, रुख फिर मोड़ दिया।



88. बदलकर खोना

भूमिका: ज़िंदगी में कई बार रिश्ते किसी फासले या झगड़े से नहीं टूटते। वक़्त के साथ इंसान बदल जाते हैं, और वो बदलाव ही दूरियों की वजह बन जाता है। हम किसी को इसलिए नहीं खोते कि वो चले गए, बल्कि इसलिए खो देते हैं क्योंकि हम दोनों ही वो इंसान नहीं रहे जो कभी हुआ करते थे। यह नज़्म उसी खामोश और अजीब सी जुदाई के नाम है, जहाँ हम एक-साथ रहकर भी अजनबी हो जाते हैं।

हम साथ रहकर भी, बिल्कुल अजनबी हो गए,
एक ही मकान में, गुमनाम से हो गए।
हमने कभी एक दूजे, को नहीं छोड़ा था,
पर अपने ही वजूद, में हम खो गए।

उस पुराने शख्स की, आज भी कमी है,
इन खामोश आँखों में, एक अजीब नमी है।
वो इंसान अब भी, मेरे पास बैठा है,
पर हमारे बीच आज, खामोशी सी थमी है।

ये नया सा रूप, पुराना सच छुपाता है,
हँसते हुए रिश्ते को, पल में मिटाता है।
हमारी इस कहानी में, कोई दूर नहीं गया,
पर ये बदला हुआ अक्स, बहुत रुलाता है।

हम इस पुराने रिश्ते को, चुपचाप निभाते हैं,
अपने इस खालीपन को, हम रोज़ छुपाते हैं।
ना कोई तकरार हुई, ना ही कोई रूठा,
पर एक दूजे से हम, नज़रें चुराते हैं।

हमारे बीच आज ये, अजीब सा फासला है,
ये खामोश दूरियों का, एक नया सिलसिला है।
हमने दुनिया से कोई, वास्ता ही नहीं रखा,
फिर भी ये रिश्ता, एक तन्हा काफिला है।



89. बे-वजह सुकून

भूमिका: ज़िंदगी की भागदौड़ और उलझनों के बीच, कभी-कभी एक ऐसा पल आता है जब बिना किसी वजह के मन बिल्कुल शांत हो जाता है। कोई बड़ी खुशी नहीं मिलती, कोई मसला हल नहीं होता, फिर भी अंदर एक अजीब सी तसल्ली महसूस होती है। यह नज़्म उसी बे-वजह सुकून के नाम है, जो हमें पल भर के लिए सारी दुनिया की फिक्र से आज़ाद कर देता है।

आज बिना वजह सुकून, रूह में उतरा है,
इस खामोश हवा में, ये वक़्त ठहरा है।
मेरी ज़िंदगी में आज, कोई शोर नहीं,
ये बेनाम सा एहसास, बहुत ही गहरा है।

ना जाने ये तसल्ली, कहाँ से आती है,
ये खामोश सी हवा, रूह को सहलाती है।
मेरे कल की फिक्र, आज दूर चली गई,
ये अजीब सी राहत, मुझे बहुत भाती है।

ऐसा सुकून ज़िंदगी में, बहुत कम होता है,
ये खामोश सा मन, चैन से सोता है।
इन पलों में मुझे, कुछ नहीं चाहिए,
ये खामोश सा एहसास, रूह को भिगोता है।

इस खामोश पल में, दिल शांत रहता है,
ये सुकून मेरी रगों, में आज बहता है।
दुनिया की भीड़ से, मैं बहुत दूर हूँ,
ये खामोश सा वक़्त, मुझसे कुछ कहता है।

बिना वजह ये सुकून, आज लौट आया है,
ये अपने साथ एक, नया नूर लाया है।
मैं इसी पल में, बस ठहर जाना चाहता हूँ,
आज मेरे ज़हन पे, ये सुकून छाया है।



90. आखिरी उम्मीद

भूमिका: ज़िंदगी के सफर में जब सारे रास्ते बंद नज़र आते हैं, तब भी दिल के किसी कोने में एक छोटी सी उम्मीद बाकी रहती है। यह वो धागा है जो बहुत कमज़ोर है, लेकिन हम उसे छोड़ना नहीं चाहते, क्योंकि उसके टूटने का मतलब सब कुछ खत्म होना है। यह नज़्म उसी आखिरी उम्मीद के नाम है, जो अंधेरे में एक हल्की सी रौशनी की तरह चुपचाप जलती रहती है।

दिल के कोने में, चिराग जलता है,
हार के अंधेरे में, ख्वाब पलता है।
सब कुछ खोने का, खौफ सताता था,
फिर भी कच्चा धागा, साथ चलता है।

इस वीराने में आज, आस बाकी है,
इन खामोश आँखों में, प्यास बाकी है।
मुझको भी मालूम है, वो ना आएगा,
फिर भी मेरे अंदर, विश्वास बाकी है।

इस आखिरी उम्मीद को, बहुत छुपाया है,
अपने खामोश मन को, मैंने समझाया है।
दुनिया को लगता है, हार चुका हूँ,
मैंने इस अंधेरे में, दीप जलाया है।

भ्रम के टूटने का, खौफ रहता है,
ये खामोश सा दर्द, अंदर बहता है।
अगर ये धागा टूटा, तो क्या होगा,
तन्हा सा वजूद मेरा, चुपचाप सहता है।

ये बेनाम उम्मीद ही, मेरी ताकत है,
इस तन्हा सफर में, यही राहत है।
शायद इस सफर की, कोई मंज़िल नहीं,
ये कमज़ोर सी आस, मेरी अमानत है।



X. ख़ुद से मुलाक़ात

91. मैं कौन हूँ?

भूमिका: ज़िंदगी भर हम खुद को अपने काम, अपने रुतबे और अपने रिश्तों से पहचानते हैं। हम किसी के दोस्त हैं, किसी के हमसफर, या हमारी एक पहचान है। लेकिन जब ये सारी परतें, ये सारे मुखौटे उतर जाते हैं, तब अंधेरे में जो बचता है—वो हम असल में हैं। यह नज़्म उसी गहरे और आखिरी सवाल के नाम है कि इन सभी दायरों के बाहर, हम आखिर हैं कौन?

मैं दुनिया की भीड़ में, बस चलता हूँ,
मैं अपने ही साए में, रोज़ पलता हूँ।
मेरा इस दुनिया में, कोई नाम नहीं,
मैं रोज़ नए रूप में, बस ढलता हूँ।

ये रुतबा और शोहरत, सब दिखावा है,
ये मेरा खुद से ही, एक छलावा है।
मैंने उम्र भर खुद को, बहुत छुपाया था,
इस झूठी सी पहचान का, बस दावा है।

मैं अपनों की भीड़ में, तन्हा होता हूँ,
मैं अपने ही अंदर, कहीं खोता हूँ।
ये दुनिया की महफ़िल, पीछे छूट जाएगी,
मैं खुद के साए में, रोज़ सोता हूँ।

मैंने अपनी हकीकत को, आज जाना है,
इस खामोश से दर्द को, पहचाना है।
मेरे वजूद का ये सफर, कैसा होगा,
मैंने खुद को एक, मुसाफिर माना है।

मैं इन सारे रिश्तों से, आज़ाद हूँ,
मैं अपने तन्हा सफर में, आबाद हूँ।
मैंने दुनिया के दायरों को, तोड़ दिया,
मैं अपने ही वजूद की, बुनियाद हूँ।



92. ख़ुद को माफ़ करना

भूमिका: ज़िंदगी में दूसरों को माफ़ करना शायद आसान होता है, लेकिन खुद को माफ़ करना सबसे मुश्किल काम है। हम अपनी गलतियों, अपनी कमियों और अपने टूटने का बोझ सालों तक अकेले ढोते रहते हैं। यह नज़्म उस सुकून के नाम है, जब हम आखिरकार आईने में देखकर खुद से कहते हैं कि जो हुआ, उसके लिए हम खुद को माफ़ करते हैं।

मैंने गैरों को तो, माफ़ किया है,
पर खुद को सज़ा में, रोज़ जिया है।
अपनी ही नज़रों से, गिरता रहा मैं,
आज खुद को भी मैंने, बख्श दिया है।

मैंने अपने ही वजूद को, बहुत रुलाया,
अपनी ही रूह को मैंने, बहुत सताया।
मुझे दुनिया से अब, कोई गिला नहीं,
मैंने खुद को ही खुद से, नहीं बचाया।

मेरा अपना ही ज़मीर, मुझे सताता है,
गुज़रे कल का अक्स, बहुत रुलाता है।
खुद से ही मैंने, कितनी नफरत की थी,
आज खुद पे मुझे, कुछ रहम आता है।

मैंने अपने ही हाथों, दिल को तोड़ा है,
खुद को तन्हाई में, ले जाकर छोड़ा है।
इस सफ़र में कोई, मेरा दुशमन नहीं,
आज मैंने खुद से, रिश्ता फिर जोड़ा है।

आज मैंने अपनी रूह को, आज़ाद किया,
अपने इस उजड़े मन को, आबाद किया।
उम्र भर खुद को सज़ा, मैं देता रहा,
आज खुद को ही मैंने, फिर याद किया।



93. अपने पुराने रूप से मुलाक़ात

भूमिका: ज़िंदगी के सफर में सबसे अजीब पल वो होता है, जब हम अपने ही पुराने रूप से टकराते हैं। हम याद करते हैं कि हम कभी कितने मासूम, कितने ज़िंदा और दुनिया की चालों से कितने अनजान हुआ करते थे। यह नज़्म उसी खामोश सी मुलाक़ात के नाम है, जहाँ हम अपने ही गुज़रे हुए कल को देखकर शर्मिंदा भी होते हैं, और उसे हमेशा के लिए अलविदा भी कह देते हैं।

आज आईने में एक, अजनबी नज़र आया,
मैंने अपने ही पुराने, अक्स को पाया।
वो शख्स मेरे आज से, बहुत दूर था,
वक़्त ने मेरा आज, कैसा रूप बनाया।

उसकी आँखों में एक, मासूम परिंदा था,
वो शख्स अपने ख्वाबों में, बहुत ज़िंदा था।
दुनिया की चाल से, वो बिल्कुल अनजान रहा,
आज उसे देखकर मैं, बहुत शर्मिंदा था।

उसने मेरी आँखों में, एक सवाल देखा है,
मैंने अपने ही चेहरे पे, मलाल देखा है।
हम दोनों के बीच, एक पर्दा गिरा,
मैंने अपनी ही रूह का, ये हाल देखा है।

वो पुराना शख्स मुझसे, आज रूठ गया,
मेरे अंदर का हर, हौसला टूट गया।
ज़िंदगी की इस दौड़ में, मैं अकेला हूँ,
मेरा खुद से ही, वो रिश्ता छूट गया।

मैंने अपने उस रूप को, आज विदा किया,
खुद को उस मासूमियत से, हमेशा जुदा किया।
मुझे अब इस बदलाव से, कोई शिकायत नहीं,
मैंने अपने इस सफर का, कर्ज़ अदा किया।



94. जो खोया, उसने सिखाया

भूमिका: ज़िंदगी में जब हम कुछ खोते हैं, तो पहले सिर्फ दर्द और खालीपन महसूस होता है। लेकिन वक़्त के साथ समझ आता है कि हर नुकसान अपने साथ एक गहरा सबक लेकर आता है। जो हाथ से छूट गया, उसी ने हमें असल मायने में जीना सिखाया। यह नज़्म उसी दर्द के नाम है, जो वक़्त के साथ हमारी सबसे बड़ी समझ और ताक़त बन जाता है।

मेरे इस खालीपन ने, बहुत कुछ बदला है,
मेरे अंदर का इंसान, आज कुछ संभला है।
जब मेरे हाथों से, हर रिश्ता छूट गया,
इस खामोश अंधेरे ने, मुझसे एक नया रिश्ता जोड़ा है।

इन टूटे हुए रिश्तों, ने बहुत समझाया है,
मेरे इस नुकसान ने, मुझे आज जगाया है।
मैं अपनी ही मंज़िल, से बिल्कुल अनजान था,
इस खालीपन ने मुझे, फिर से बनाया है।

इंसान बस ठोकर खाकर, ही निखरता है,
वो दर्द की आग से, जब गुज़रता है।
जब तक कुछ ना खोए, समझ नहीं आती,
टूटने के बाद ही, ये वजूद संवरता है।

जो पीछे छूट गया, बहुत याद आता है,
वो गुज़रा हुआ कल, एक सच बताता है।
हम जिसे अपनी जागीर, मान बैठे थे,
वक़्त हमें वही आईना, रोज़ दिखाता है।

इस दर्द ने मुझे, बहुत काबिल बनाया है,
मैंने अपने वजूद को, आज फिर सजाया है।
अब मुझे इस अंधेरे से, कोई खौफ नहीं,
जो खोया उसी ने, मुझे जीना सिखाया है।



95. अब किसी को साबित नहीं करना

भूमिका: ज़िंदगी का एक बड़ा हिस्सा हम खुद को सही साबित करने में निकाल देते हैं। हम चाहते हैं कि दुनिया हमें समझे, हमारी कदर करे और हमें अच्छा माने। लेकिन एक दिन वो आज़ादी का पल आता है, जब हमें किसी की गवाही या किसी के सुबूत की ज़रूरत नहीं रहती। यह नज़्म उसी गहरे और खामोश सुकून के नाम है, जहाँ हमें अब किसी को कुछ भी साबित नहीं करना होता।

मैंने ज़माने को दलील, देना छोड़ दिया,
अपने सच का यकीन, दिलाना छोड़ दिया।
वो मुझे अब अपने, मन का जो भी समझें,
मैंने हर एक सुबूत, दिखाना छोड़ दिया।

मैंने खुद को गलत, कहलाना मान लिया है,
इस खामोशी को अपना, ठिकाना मान लिया है।
कोई मेरे बारे में, कुछ भी बुरा सोचे,
मैंने इस सच को, फसाना मान लिया है।

मेरा ये खालीपन ही, मेरे लिए खास है,
मुझे अपनी हकीकत पे, अब विश्वास है।
दुनिया की सोच से, मैं बहुत दूर हूँ,
मेरे इस वजूद में, एक नया एहसास है।

मुझे किसी की गवाही, की अब ज़रूरत नहीं,
मुझे अपनी ही सफाई, की अब ज़रूरत नहीं।
मेरा अपना वजूद ही, मुझे पहचानता है,
मुझे दुनिया से रिहाई, की अब ज़रूरत नहीं।

मैंने इस आज़ादी का, जश्न आज मनाया है,
अपने सीने में इस सुकून, को जगाया है।
दुनिया को मेरा सच, अब नज़र ना आए,
मैंने खुद को ही आज, गले लगाया है।



96. देर से समझ आया

भूमिका: जवानी के जोश में हम अक्सर झूठे रिश्तों, दौलत और दुनिया की वाहवाही के पीछे भागते रहते हैं। लेकिन जब उम्र ढलने लगती है, तब हमें समझ आता है कि जिन चीज़ों के लिए हम लड़ रहे थे, उनका कोई वजूद ही नहीं था। असली सुकून तो हमारे अपने अंदर था। यह नज़्म उस गहरी समझ और तजुर्बे के नाम है, जो हमें ज़िंदगी में बहुत देर से हासिल होता है।

उम्र के इस मोड़ पे, मैंने सच पाया,
गैरों की खातिर मैंने, अपना सुकून गंवाया।
जिस मंज़िल की चाह में, मैंने उम्र गुज़ारी,
वो मुकाम बस धुंध था, एक ढलता साया।

इन झूठे रिश्तों का, जब मुझे सच मिला,
अब मुझे इस दुनिया से, नहीं रहा गिला।
मैंने बाहर की महफ़िल, में खुद को ढूंढा,
पर मेरे ही अंदर था, सुकून का सिला।

मेरी आँखों से अब, दुनिया का भ्रम हटा,
मेरे ज़हन से हर, एक झूठा खौफ मिटा।
मैंने अपनी सारी उम्र, बस शोर में काटी,
आज मेरे इस तन्हा, सफर का शोर टूटा।

मेरे अंदर का वो, गुरूर अब ढल गया,
मेरा ये तन्हा सफर, बहुत आगे निकल गया।
मुझे अब ज़माने की, कोई चाहत ना रही,
आज मेरा ये वजूद, खामोशी में संभल गया।

ज़िंदगी के सफर की, आज ढल गई शाम,
मुझे आज जाके मिला, एक खामोश सा मुकाम।
मैं उम्र भर गैरों से, वफ़ा माँगता रहा,
आज अपनी रूह को, मैंने दे दिया आराम।



97. अब अकेले भी ठीक हूँ

भूमिका: ज़िंदगी के एक पड़ाव पर आकर हमें समझ आता है कि महफ़िलें अक्सर अंदर से बहुत खाली होती हैं। यह वो पल है जब तन्हाई कोई सज़ा नहीं, बल्कि एक ताक़त बन जाती है। जब इंसान को खुद से बात करने का सुकून मिल जाए, तो उसे किसी और की ज़रूरत नहीं रहती। यह नज़्म उस गहरी आज़ादी के नाम है, जहाँ इंसान अकेले होने से नहीं डरता, बल्कि अपनी ही संगत में पूरी तरह मुकम्मल महसूस करता है।

मैंने इस खामोशी में, अपना घर बनाया,
भीड़ के इस शोर को, पीछे छोड़ आया।
मुझे महफ़िलों की अब, कोई चाहत नहीं,
मैंने अपने वजूद को, आज गले लगाया।

मैंने अपनी तन्हाई को, कर लिया मंज़ूर,
इन झूठी आवाज़ों से, मैं हो गया दूर।
मुझे अब गैरों से, कोई उम्मीद नहीं,
मेरा ये खालीपन ही, बना मेरा गुरूर।

मैंने अपने ही चेहरे से, हटा दिया नकाब,
मैंने अपने ही अंदर, पढ़ ली एक किताब।
मैं अपनी ही दुनिया का, एक मुसाफिर बना,
मेरी खामोशी ही मेरा, सबसे गहरा जवाब।

मुझे अपना तन्हा सफर, आने लगा रास,
मेरे अंदर की बुझ गई, हर एक प्यास।
मुझे अब किसी की भी, कोई तलाश नहीं,
मैं अकेले इस सफर में, हूँ अपने पास।

मैंने दुनिया की भीड़ से, आज ली रिहाई,
मैंने अपने ही वजूद में, पा ली खुदाई।
किसी भी हमसफर की अब, कोई चाहत नहीं,
मेरी रूह को अब भा गई, मेरी ये तन्हाई।



98. ज़िंदगी से शिकायत कम हो गई

भूमिका: ज़िंदगी से हमारी हमेशा कोई न कोई शिकायत रहती है—कि उसने हमें वो नहीं दिया जिसके हम हकदार थे, या हमारे साथ नाइंसाफी हुई। लेकिन एक वक़्त ऐसा आता है जब हम लड़ना छोड़ देते हैं। हार कर नहीं, बल्कि यह समझ कर कि ज़िंदगी जैसी भी है, अपनी है। यह नज़्म उसी गहरे ठहराव और सुकून के नाम है, जहाँ शिकायतें मिट जाती हैं और सिर्फ एक खामोश स्वीकृति बाकी रह जाती है।

मैंने अपने मुकद्दर का, कर लिया है हिसाब,
मेरी आँखों में अब, नहीं है कोई ख्वाब।
मैंने दुनिया से लड़ना, अब बिल्कुल छोड़ दिया,
मेरी खामोशी ही अब, बन गई मेरा जवाब।

ज़िंदगी का हर एक, फैसला है मुझे मंज़ूर,
मेरे अंदर का आज, टूट गया हर गुरूर।
मुझे किसी से भी, कोई उम्मीद नहीं रही,
मेरी मुझसे से आज, हर शिकायत हुई दूर।

मेरी किस्मत में जो, रह गई थी कमी,
मेरी आँखों में जो, ठहर गई थी नमी।
मैंने अपने हर दर्द, को सीने से लगाया,
आज मेरे वजूद की, हर एक जंग थमी।

मेरी ज़िंदगी का आज, बदल गया है सफर,
मुझे अब आने वाले, कल की नहीं खबर।
मैंने अपने हर खौफ, को आज मिटा डाला,
इस खामोश तन्हाई का, मुझ पे हुआ असर।

ज़िंदगी से मेरा अब, खत्म हुआ हर गिला,
मेरे इस खालीपन को, एक नया सुकून मिला।
मैंने अपनी मंज़िल का, रास्ता ही बदल लिया,
यहीं से शुरू हुआ, मेरी शांति का सिलसिला।



99. मैं अभी अधूरा हूँ

भूमिका: ज़िंदगी भर हम खुद को मुकम्मल (पूरा) करने की होड़ में लगे रहते हैं। हमें लगता है कि हमारे अंदर कोई कमी नहीं होनी चाहिए। लेकिन सच तो ये है कि अधूरापन कोई खोट नहीं, बल्कि एक खूबसूरती है। जो पूरा हो गया, उसका सफर वहीं खत्म हो जाता है। यह नज़्म उसी अधूरेपन के नाम है, जो हमें हमेशा कुछ नया सीखने और आगे बढ़ने की गुंजाइश देता है।

मुझे अपने अधूरेपन का, नहीं है कोई मलाल,
मेरी इन कमियों में, छिपा है एक कमाल।
मैं अब मुकम्मल होने की, ज़िद से पीछे हट गया,
मैंने अपने अधूरेपन की, कायम की एक मिसाल।

जो मुकम्मल हो गया, उसका खत्म हुआ सफर,
पूर्णता के बाद बस, ठहर जाती है डगर।
मुझे पूरे होने की, अब कोई चाहत नहीं,
मैं अब भी हूँ बहती हुई, एक ज़िंदा सी लहर।

मेरे अधूरेपन में अभी, बाकी है एक उड़ान,
मुकम्मल होने से है बड़ी, मेरी पहचान।
मैंने खुद को तराशने, की अब ज़िद छोड़ दी,
मुझे अपने अधूरेपन पे, आज है बड़ा गुमान।

मेरी ज़िंदगी अभी भी, है एक अधूरा साज़,
मुझमें बाकी है अभी, एक अनकही सी आवाज़।
मैं पूरे चाँद सा, कभी ढलना नहीं चाहता,
मेरे इस अधूरेपन का, है एक अपना अंदाज़।

मुझे अपना ये अधूरापन, आने लगा है रास,
मेरे सीने में अभी, बाकी है एक प्यास।
जो मुकम्मल हो गया, वो मील का पत्थर बन गया,
मुझे अपने अधूरेपन का, है एक हसीन एहसास।



100. आख़िर में मैं

भूमिका: ज़िंदगी के सफर में हम कई रिश्ते बनाते हैं, कई पहचान ओढ़ते हैं, और न जाने कितने सवालों के जवाब ढूँढते हैं। लेकिन जब यह सब पीछे छूट जाता है, तब इंसान खुद के सामने खड़ा होता है। यह वो मुकाम है जहाँ हमें खुद की नादानियों को माफ़ करना पड़ता है और बिना जवाब वाले सवालों को कबूल करना होता है। बाहर की दुनिया बदलती रहे, पर खुद के भीतर अपना एक घर मिल ही जाता है। यह नज़्म उसी आखिरी सफर के नाम है, जहाँ सब कुछ खोने के बाद भी, आख़िर में सिर्फ 'मैं' बचता हूँ।

मैंने अपने वजूद से, हर नकाब हटा दिया,
दुनिया का दिया हर नाम, मैंने आज मिटा दिया।
मुझे इन झूठे लिबासों की, कोई चाहत ना रही,
मैंने अपने ही सच को, आज खुद से मिला दिया।

मेरी नादानियों की जो भी, रह गई थी कमी,
खुद को माफ़ कर दिया, मिट गई हर नमी।
मैं सारी उम्र खुद से, बस लड़ता ही रहा,
आज मेरे अंदर की, हर एक जंग है थमी।

बदलते हुए रिश्तों का, मैंने देखा है मंज़र,
पर मेरी इस रूह में, है शांत एक समंदर।
मैंने ज़माने को उसकी, राह पे छोड़ दिया,
मैं खामोशी से उतर गया, अपने ही अंदर।

मैंने हर एक सवाल का, छोड़ दिया हर हिसाब,
हर एक पन्ने को मैंने, मान लिया एक ख्वाब।
मुझे अब इस ज़माने से, कुछ पूछना नहीं,
मेरी खामोशी ही आज, बन गई मेरा जवाब।

मैंने अपने ही वजूद में, ढूँढ लिया आशियाना,
मेरे अंदर सिमट गया, आज ये सारा ज़माना।
मुझे दुनिया की भीड़ से, अब वास्ता नहीं,
आख़िर में मैं बचा, आज बनके अपना ठिकाना।



आखरी खत

अब जब आप इस किताब का आखरी पन्ना पढ़ रहे हैं, तो यह सफर यहाँ खत्म होता है। हमने साथ मिलकर 100 शायरियों का रास्ता तय किया है।

शायद आपने इन पन्नों में अपनी कहानी ढूँढी होगी, शायद अपने कुछ पुराने ज़ख्मों को फिर से महसूस किया होगा। लेकिन मेरी सबसे बड़ी कामयाबी यह होगी कि अगर इस किताब को बंद करते वक़्त, आपको तन्हाई से डर लगना बंद हो जाए।

ज़िंदगी हमेशा मुकम्मल नहीं होती, और उसे मुकम्मल होने की ज़रूरत भी नहीं है। जो अधूरा है, वही ज़िंदा है। दुनिया चाहे कितनी भी बदल जाए, आप हमेशा अपने लिए एक घर बने रहें।

खामोशी का यह सफर आपके नाम।

Email: gaurav.vashishtha19@gmail.com
Phone: +91-9999742765